मानवीय विद्युत के चमत्कार



-पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

मानवीय विद्युत के चमत्कार

लेखक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् **२०११** मूल्य : १२.०० रुपये

निवेदन

इस पुस्तक में मनुष्य शरीर की बिजली द्वारा जो कार्य संपन्न होते हैं, उन पर प्रकाश डाला गया है। जिस प्रकार स्वास्थ्य विज्ञान जानना हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है, उसी प्रकार उसे अपनी सबसे मूल्यवान वस्तु 'शारीरिक विद्युत' के बारे में जानना चाहिए। कितने दुःख की बात है कि हम में से बहुत से सुशिक्षित लोग भी इस महत्त्वपूर्ण विज्ञान की मोटी-मोटी बातों से परिचित नहीं हैं और इस जानकारी के अभाव में गलत मार्गों को अपनाकर दुःख उठाते रहते हैं।

इस महाविज्ञान को पूरी तरह न तो इस छोटी सी पुस्तक में समझाया जा सकता था और न उन लोगों को बहुत अधिक गहरी एवं विस्तृत बातों को जानना रुचेगा, जिन तक कि हम इस पुस्तक को पहुँचाने की इच्छा रखते हैं। इसलिए मोटे तौर से रोज मर्रा के जीवन में काम आने वाली बातों में मानवीय विद्युत का क्या और किस प्रकार असर होता है, इस बात को समझाने का प्रयत्न किया गया है।

हर बात को विज्ञान की तराजू से तौलने वालों को धर्म और प्राचीन रीति-नीतियों के औचित्य का अनुभव करने का अवसर मिलेगा और वे देखेंगे कि भारतीय धर्मशास्त्र एवं आचारशास्त्र अंधविश्वास या दंभ पर नहीं वरन् मनोविज्ञान एवं साइंस के गंभीर अभिज्ञान पर अवलंबित है। इस पुस्तक में एक गूढ़ विज्ञान की सरल सी व्याख्या की गई है, किसी विधि निषेध पर विशेष जोर नहीं दिया गया है, ताकि सर्वसाधारण निष्पक्ष रूप से इस पर विचार कर सके। अपने विषय की यह निराली पुस्तक हिंदी साहित्य के अंग को पूर्ण करेगी, ऐसा हमारा अनुमान है।

-श्रीराम शर्मा आचार्य

मानवीय विद्युत के चमत्कार

आत्म तेज का परिचय

मनुष्य का शरीर एक अच्छा खासा बिजली घर है। जैसे बिजलीघर में से सारे शहर के लिए तार लगे रहते हैं, उसी प्रकार मस्तिष्क में से निकल कर जो पतले-पतले तार समस्त शरीर में जाल की तरह फैल गए हैं, उन्हें ज्ञान तंतु कहा जाता है। यह टेलीफोन का काम करते हैं। देह को जरा सा भी कहीं छू दो तो यह तार फौरन मस्तिष्क को सूचना देंगे और वहाँ बैठा हुआ अधिकारी क्षण भर में यह फैसला करेगा कि अब क्या करना चाहिए। पाँव में चींटी काट खाए तो तुरंत ही ज्ञान तंतु इसकी रिपोर्ट मस्तिष्क में पहुँचायेंगे और मस्तिष्क बिना एक क्षण का विलंब लगाए उस चींटी के काटते ही हम अपना पैर फटकारते हैं, जिससे चींटी छूट जाय और काटे हुए स्थान का विष खुजलाने से निकल जाय एवं रगड़ से वहीं खून का दौरा विशेष रूप से होने लगे, जिससे घाव भरने में शीघ्रता हो। यह ज्ञान तंतु सर्दी, गर्मी, हवा, नमी आदि की भी सूचना पहुँचाते हैं, जिसके आधार पर उनसे शरीर की रक्षा का कपड़े, छाते आदि से प्रबंध किया जाता है। कुछ तार इनसे मोटे होते हैं, जिन्हें नसें कहते हैं। कहने को तो ये खून बहाने वाले नालियाँ कही जाती हैं, परंतु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यह विद्युत बहाने वाले तार हैं। जब इन नसों की बिजजी मंद पड़ जाती है, तो खून बहता रहता है पर शरीर में बड़ी जड़ता या अकड़न आ जाती है, उनमें दर्द होने लगता है। गठिया की बीमारी में या अन्य नसों संबंधी रोगों में कहीं खून का बहना बंद नहीं होता (क्योंकि खून न पहुँचने पर तो वह अंग मर ही जाएगा।) वरन् नसों की बिजली मंद पड़ जाने के कारण वे निर्बल और कठोर हो जाती हैं। जब उन पर रक्त या अन्य कार्यों का दबाब

पड़ता है तो उन्हें बरदाश्त नहीं होता और दर्द, दाह या उत्तेजना का अनुभव करने लगती हैं। रक्त या माँस में जो जीवनी शक्ति या सजीव तत्त्व है वह एक प्रकार की बिजली है। शरीर से बाहर निकल जाने पर जब रक्त की बिजली हवा में उड़ जाती है तो वही वस्तु जो एक क्षण पूर्व बड़ी सक्रिय थी, दूसरे ही क्षण निर्जीव, मृत होकर सड़ने एवं दुर्गंध फैलाने लगती है। प्राणांत होने के उपरांत शरीर की सब धातुएँ मिट्टी हो जाती हैं। किसी प्राणी का वध किया जाय तो उसके शरीर की बिजली तुरंत ही समाप्त नहीं हो जाती है, वरन् धीरे-धीरे घटती है। जिस अनुपात में वह घटती जाती है, उसी प्रकार उसी अनुपात में मांस निर्जीव होता जाता है। अधिक समय तक रखा हुआ मांस जब दूषित-विद्युत हीन हो जाता है, तब वह बेकार हो जाता है। खाने के काम में नहीं आ सकता।

आत्मा इस विद्युत शक्ति का आद्य बीज है। छोटे से शरीर की थोड़ी भी शक्ति पर दृष्टिपात करने से आत्मा एक बहुत छोटी वस्तु प्रतीत होती है, क्योंकि उसके चलने फिरने, बोझ उठाने, काम करने, सोचने आदि की शक्तियाँ बहुत सीमित मालूम पड़ती हैं। कई बातों में तो मनुष्य की अपेक्षा अन्य जीव-जंतु अधिक शक्ति रखते हैं। मोटी दृष्टि से देखने में प्राणी चाहे जितना तुच्छ प्रतीत क्यों न हो पर उसमें एक बड़ा ही अद्‌भुत गुण है, वह है उसकी उत्पादन शक्ति। बरगद का छोटा सा बीज अपने पेट में एक बड़ा भारी विशाल वृक्ष छिपाये रहता है और जब भी उसे अवसर मिलता है, अपनी उस छिपी हुई शक्ति को वृक्ष बन कर प्रकट कर देता है। जीव चैतन्य है और अपना पोषण अनंत चेतना से प्राप्त करता है, इसलिए उसके अंदर वह शक्ति है कि अपनी आकर्षण शक्ति को चाहे जितनी बढ़ा ले और फिर उसके जरिये जिस वस्तु को जितनी मात्रा में चाहे अपने पास खींच कर इकट्ठी कर ले। बरगद के बीज में महान वृक्ष उत्पन्न

करने की शक्ति है, इसे सब जानते हैं, परंतु कई बार बीज निरर्थक नष्ट हो जाते हैं, उनका अंकुर निकलते ही झुलसा जाता है या कुछ ही बढ़ने पर उनका पौधा मुरझा कर बरबाद हो जाता है। इसका कारण बीज की अयोग्यता नहीं, वरन उत्पादन क्रिया की त्रुटि है। असंख्य मनुष्य अपना जीवन बड़ी निकृष्टता के साथ गुजारते हैं, उनका जीवन ऐसा दु:खमय और नारकीय होता है कि यह मानने में संदेह उठता है कि मनुष्य की आत्मा, क्या परमात्मा के दिव्य गुणों से भरी हुई है।

वेदांत कहता है कि जीव और ईश्वर एक है, परंतु हम मनुष्य में परमात्मा के गुणों का अभाव देखते हैं और उपरोक्त शास्त्र वचन पर विश्वास करते हैं। हमें जानना चाहिए कि वर्तमान स्थिति में मनुष्य बीज है और परमात्मा वृक्ष। मोटे तौर से वृक्ष और बीज की बराबरी की तुलना नहीं हो सकती, परंतु तत्वत: यह भेद सत्य नहीं है। अपनी उत्पादन शक्ति का ठीक तरह प्रयोग न करने से ही मनुष्य मलीन अवस्था में पड़ा रहता है और अपना विकास नहीं कर पाता। उसे इस बात की पूरी आजादी है कि अपनी उत्पादन शक्ति को बढ़ावे, चाहे जितनी और चाहे जिस दिशा में बढ़ावे। मन, आत्मा की एक इंद्रिय है। मन का धर्म इच्छाएँ उत्पन्न करना है। मन में इच्छा हुई कि दिल्ली का किला देखें, तुरंत ही उसकी सेविका कल्पना शक्ति ने किले का एक कल्पना चित्र खड़ा कर दिया। अब यदि मन की इच्छा निर्बल होगी तो वह चित्र कुछ क्षण बाद विलीन हो जाएगा और यह इच्छा बलवान होगी तो किले के मानसिक चित्र को पोषण मिलेगा। इच्छा शक्ति की खाद-खुराक से यह चित्र कुछ ही समय में परिपुष्ट हो जाएगा और दिल्ली के किले की वास्तविक प्रतिमा के साथ अपनी घनिष्ठता स्थापित करने लगेगा। बुद्धि को अनेक बातें अपने आप ऐसी सूझ पड़ने लगेंगी जो उस किले से संबंध रखती

हैं, बुद्धि की स्वच्छता के अनुपात में इनमें से अधिकांश सत्य होंगी। यदि उस मानसिक चित्र को इच्छा का पोषण बराबर मिलता रहे तो बाहर की परिस्थितियाँ कितनी ही विपरीत हों, धीरे-धीरे वह आकर्षक चित्र अपना काम करता रहेगा और परिस्थितियों के अनुकूल करके एक दिन दिल्ली के किले का दर्शन करा देगा। इच्छा उठने के क्षण से लेकर वह कार्य पूरा होने तक मार्ग की करोड़ों छोटी-मोटी बाधाओं को साफ करने में वह आकर्षण कितने-कितने संघर्ष करता है, इसे हम नहीं जान पाते। इच्छा के आकर्षण से सफलता मिलने में कितने मानसिक कार्य होते हैं, मानसिक विद्युत असंख्य प्रकार की शारीरिक, मानसिक तथा बाहरी परिस्थितियों को कितने बलपूर्वक चीर-चीरकर अपना रास्ता साफ करती है, इसे यदि हमारी आँखें देख पातीं तो हम समझते कि बेशक हमारे अंदर अत्यंत ही शक्तिशाली चुंबक भरी हुई है।

शरीर की सारी हलचलें उसी बिजली का एक बहुत छोटा कार्य हैं। शरीर में इतनी गर्मी देखी जाती है कि उससे एक घंटे में करीब एक मन बर्फ घुल सके। यह गर्मी कहाँ से आती है? तुम्हें जानना चाहिए कि भीतर जो बिजली घर चल रहा है, यह उसका धुआँ-धप्पड़ और गर्द-गुबार है। भीतर तो इतनी गर्मी है जितनी में पृथ्वी पर पैदा होने वाला कोई जीव जिंदा नहीं रह सकता। कई मनुष्यों के चेहरे पर ऐसा तेज होता है, जिसके आगे तलवार और बंदूकें कुंठित हो जाती हैं। यह तेज सफेदी या चमक नहीं है, वरन प्रचंड विद्युत धारा है। जब एक मनुष्य हजारों विरोधियों के बीच सफलता प्राप्त करके निकलता है, तो यह कार्य उसके हाड़-मांस का नहीं, वरन आत्म तेज का होता है। अगले अध्याय में हम बताएँगे कि इस आत्म विद्युत को सूक्ष्म इंद्रियों से ही नहीं, वरन् इन मोटी इंद्रियों, आँख, नाक, त्वचा आदि से भी अनुभव

किया जा सकता है। यहाँ तो हमारा अभिप्राय यह बताने का है कि शरीर की सारी हरकतें उस विद्युत के द्वारा हो रही हैं, जो मन की महान विद्युत का एक अंश है। एक डाक्टर ने हिसाब लगा कर बताया कि हमारे शारीरिक और मानसिक कार्यों को चलाने में जितनी विद्युत शक्ति खर्च होती है, उतनी से एक बड़ा मिल चल सकता है। छोटे बच्चों में भी इतनी बिजली काम करती है, जितनी से रेल का इंजन दौड़ सके। शरीर के कामों में मन की एक तिहाई से भी कम बिजली खर्च होती है। शेष भाग को पूरा करने के प्रयत्न में लगा रहता है।

'जो जैसा बनना चाहता है, वैसा बन जाता है।' इसका रहस्य यह है कि मन जैसी इच्छा करता है, कल्पना वैसे मानसिक चित्र रचती है और लगातार की इच्छा से इन चित्रों में ऐसा चुंबक पैदा हो जाता है कि वैसे ही भौतिक पदार्थों को अपने निकट खींचते हैं। किसी वस्तु को लाने, उठाने, ले जाने, प्राप्त करने में सदैव कुछ प्रयत्न करना पड़ता है। इच्छा की तीव्रता के अनुसार मन की धारा चारों ओर उड़-उड़ कर अनुकूल वातावरण तैयार करती है। शरीर में वैसी क्रिया उत्पन्न करती है, बुद्धि में तरकीबें उठाती है, संकटों का मुकाबला करने योग्य साहस देती है और ऐसी-ऐसी गुप्त सुविधाएँ उपस्थित करती है जिन्हें हम जान भी नहीं पाते। कहते हैं कि अमुक मनुष्य ने ऐसे-ऐसे प्रयत्न करके अमुक कार्य पूरा किया। तत्वदर्शी जानता है कि यह प्रयत्न उसके शरीर ने नहीं किये, वरन् मन ने किये हैं। यदि उसकी तीव्र इच्छा न होती तो शायद ही वह पूरा होता। देखते हैं कि कई आदमी मामूली से कामों को ठीक प्रकार से नहीं कर पाते, उन्हें छोटा-सा काम करने में घँटों लग जाते हैं, करने के बाद थकान अनुभव करते हैं या झुँझलाते हैं, समझना चाहिए कि इनके मन

को इच्छा शक्ति ने इस कार्य को पूरा करने में सहयोग नहीं दिया उन्होंने केवल शरीर को घसीटा है, वह जैसा कुछ कर सकता था, किया है। देह के पास तो अपना भीतर का काम करने के लिए काफी है, उसी से बाहर के काम भी लिए जायँ तो जरूर थकान झुँझलाहट आवेगी। इसीलिए याद रखना चाहिए कि किसी कार्य का सफलतापूर्वक होना, प्रसन्नतापूर्वक होना इस बात पर निर्भर करता है कि उसके लिए अधिक से अधिक मन से इच्छा-आकर्षण का उपयोग किया जाय, क्योंकि यही तो उत्पादन का मूल स्रोत है। इच्छा की तीव्रता से क्रिया उत्पन्न होती है और यदि क्रिया का बुद्धिमत्तापूर्वक उपयोग किया जाय तो कोई कारण नहीं कि कठिन से कठिन बाधाएँ मार्ग से हट जाएँ। नेपोलियन कहा करता था 'असंभव शब्द मूर्खों के कोश में है।' चाहे उक्त कथन में कुछ अयुक्ति भले ही हो, पर सत्य का अंश अधिक है।

आत्मा को सर्वशक्तिमान इसलिए कहा गया है कि इच्छा के द्वारा वह शक्ति उत्पन्न करती है और बुद्धि के द्वारा उसका ठीक उपयोग कर लेती है। यदि बीज में उत्पन्न करने की शक्ति हो और उसका उत्पादन ठीक प्रकार से हो तो महान बरगद का वृक्ष उत्पन्न हो जायेगा। वृक्ष की अपेक्षा आत्मा अधिक चैतन्य और स्वतंत्र है, इसलिए उसकी कार्य क्षमता भी दुरूह दिशाओं तक हो सकती है। संसार में मनुष्यों ने ही अनेक वैज्ञानिक आविष्कार किये हैं, ज्ञान की खोज की है और प्रकृति पर विजय प्राप्त की है, इसका कारण कोई आकस्मिक घटना नहीं है, वरन यह उनकी इच्छा और बुद्धि के सामंजस्य का पतन है और यह दोनों ही आत्मा की प्रचंड विद्युत के उपकरण हैं। इसलिए पाठको ! अपनी विद्युत शक्ति का ज्ञान प्राप्त करो, उसका अनुसंधान करो, उस पर विचार करो और कार्य

में लाने का अभ्यास करो। तुम जैसे बनना चाहते हो, अपने जीवन में जो वस्तुएँ प्राप्त करना चाहते हो, उन्हें सच्चे दिल से चाहो, सच्ची इच्छा करो, लगन के साथ उसमें मन को प्रवृत्त करो, तो तुम्हारी क्रियाएँ उसी के अनुसार बनने लगेंगी और बुद्धि उन क्रियाओं की अशुद्धता को सँभालती रहेगी, तदनुसार सफल होकर रहोगे। मनुष्य जीवन का वास्तविक लाभ प्राप्त करने के इच्छुको ! अपनी आत्म विद्युत को समझो, उससे ठीक प्रकार काम लेना सीखो।

मनुष्य की शारीरिक-विद्युत

मनुष्य के शरीर में निरंतर एक प्रकार का विद्युत का प्रवाह जारी रहता है। शरीर और मन के अतिरिक्त यह मानसिक प्रवाह और भी कामों में उपयोग होता है और हो सकता है। इसकी सहायता से कठिन काम पूरे किये जाते हैं क्योंकि यह एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करके उसे प्रभावित करती है, और इच्छानुवर्ती बनाती है। विज्ञान द्वारा इस शक्ति का अनेक प्रकार से परीक्षण हो रहा है। अलग-अलग मनुष्यों के शरीर में जो अलग-अलग आकृतियों के तेजोवलय (Our) देखे जाते हैं, उसके आधार पर योगाभ्यासी बिना असली मनुष्य को देखे उसके निकटवर्ती वातावरण का अनुभव करके ही उसके संबंध में बहुत कुछ बातें जान लेते हैं। साइंस के अनुसार साइकोमेटरी (Psychometry) नामक एक स्वतंत्र विद्या का आविष्कार हुआ है, जिसके अनुसार आँखें बंद करके दिव्य चक्षुओं के बल से गुप्त और प्रकट बातें बतायी जाती हैं।

यह मानवीय विद्युत कोई कल्पना का विषय या वैज्ञानिक यंत्र से ही देखने की चीज नहीं हैं, वरन् यदि तुम चाहो तो खुद अपनी इंद्रियों से अनुभव कर सकते हो और आँखों से देख सकते हो। बहुत से जिज्ञासु इस अनुभव के लिए उत्सुक होंगे, इसलिए इस लेख में कुछ

ऐसे ही उपाय बताये जायेंगे, जिनके द्वारा उस बिजली को प्रत्यक्ष रूप में अनुभव में लाया जा सके।

(१) काले पर्दे की सहायता से

एक अँधेरी कोठरी इस कार्य के लिए चुनो। उसमें एक कुर्सी रखकर उसकी पीठ पर गहरे काले रंग का कपड़ा लटका दो। एक बहुत क्षीण प्रकाश का दीपक कुर्सी के आगे रख दो ताकि कुर्सी की पीठ पर लटके हुए कपड़े पर प्रकाश न पड़ने पावे, अँधेरा बना रहे। इस कपड़े के पीछे अपने लिए एक चौकी या कुर्सी बिछाओ और उस पर बैठ जाओ। अब अपने दोनों हाथों को इस प्रकार मिलाओ जैसे नमस्कार करने के लिए हाथ जोड़ते हैं। काले कपड़े और तुम्हारे हाथ के बीच एक फुट का फासला रहना चाहिए। कुर्सी के ऊपरी सतह की सीध से एक इंच नीचे हाथों को रखकर उन्हें आपस में धीरे-धीरे रगड़ना आरंभ करो और फिर इस क्रिया को उत्तरोत्तर तेज करते जाओ। ध्यानपूर्वक देखने से पता चलेगा कि झाड़ते समय एक सफेद भाप जैसा पदार्थ उनमें से निकल रहा है। कभी-कभी हथेलियों की चमड़ी चमकती मालूम पड़ेगी और कभी एक दो हल्की चिंगारी सी इधर-उधर बिखरती मालूम देंगी। नाखूनों के छोरों में चमक विशेष रूप से देखी जाती है। सूक्ष्म चीजों को अच्छी तरह देख सकने की इन स्थूल आँखों में अच्छी योग्यता नहीं होती और कभी-कभी आँखों की रोशनी कम होने से इस प्रवाह को पूरी तरह देखने में बाधा पड़ती है, फिर भी उस विद्युत प्रकाश को इतना तो देखा ही जा सकता है कि हमें उसके अस्तित्व का विश्वास हो जाय।

(२) आकर्षक प्रभाव

पालथी मार कर लकड़ी की चौकी पर बैठो। कुर्सी पर बैठना हो तो पाँव को लकड़ी के तख्ते पर रखो। जिस चौकी या तख्ते पर बैठे हो उसमें धातु की कोई ऐसी कील न लगी हो जो तुम्हारे को

छूती हुई जमीन तक पहुँचती हो। इन बातों का ध्यान रखना इसलिए आवश्यक है कि तुम्हारा शरीर जमीन को छू रहा होगा या धातु की कोई चीज शरीर को छूती हुई पृथ्वी तक पहुँच रही होगी तो शारीरिक विद्युत का प्रभाव जमीन में खिंचने लगेगा और जिस वस्तु की परीक्षा करना चाहते हो उसे देखने में सफलता नहीं मिलेगी।

चौकी या कुर्सी पर पाँव ऊँचे करके बैठना चाहिए। दोनों हाथों को आपस में इस प्रकार मिलाओ कि हथेलियों और उँगलियों के सिरे आपस में मिल जावें। हथेली के बीच का भाग जरा सा खुला रह सकता है। एक मिनट तक हथेली और उँगलियों के सिरों को आपस में खूब चिपकाने का प्रयत्न करो। तदुपरांत हथेलियों को कस कर मिलाये रहते हुए उँगलियों को मिलाये रहने का प्रयत्न करो। ऐसा करने पर चारों उँगलियों में कँपकँपी मच जायेगी, वे एक दूसरे से अलग न होना चाहेंगी। किंतु जब तुम उनका चुंबकत्व भंग करके उन्हें अलग करना चाहते हो तो मानवीय चुंबक विद्युत के आकर्षण के कारण वे काँपने लगती हैं यह अनुभव बहुत सफलता से किया जा सकता है।

(३) जल का स्वाद परिवर्तन

एक मेज पर काँच के ग्लासों में पानी भरकर रखो। उनमें से एक में अपनी उँगलियों का अग्रभाग ४-५ मिनट तक डुबोये रखो और इच्छा करते रहो कि तुम्हारी विद्युत शक्ति इस पानी में उतर रही है। इसके बाद किसी कुशाग्र बुद्धि के मनुष्य को उन दोनों जल पात्रों को दिखाओ या उन जलों में से थोड़ा-थोड़ा पिलाओ। वह व्यक्ति तुरंत ही बता देगा कि इस पानी के स्वादों में और रंगों में कितना अंतर है।

(४) चक्र में झनझनाहट

एक गोल मेज के चारों ओर कुर्सियाँ लगा कर कम से कम तीन और अधिक से अधिक सात व्यक्ति बैठें। स्थान शांत और

क्षीण प्रकाश का हो, एक प्रहर रात्रि जाने के बाद का समय इसके लिए उत्तम है। सब लोग शांत चित्त होकर बैठें और पाँव लकड़ी के तख्ते पर रखें। सब लोगों के हाथ आपस में मिलाकर एक चक्र बन जाना चाहिए। बिंदु पर शांत चित्त से दृष्टि की एकाग्रता करने पर एक विद्युत धारा बहने लगेगी और चक्र में बैठने वालों के हाथों में तथा शरीर के अन्य भागों में हल्की झनझनाहट मालूम होने लगेगी।

(५) मृत वस्तुओं को जीवित रखना

एक ही समय के टूटे दो फल या फूल या किसी मृत प्राणी के शरीर लो। एक को परीक्षा के तौर पर किसी दूसरे व्यक्ति के पास छोड़ दो और दूसरे को अपने पास रखो। दूसरा व्यक्ति उसे जहाँ चाहे वहाँ रखे तुम उस वस्तु को अपने पास रखो और थोड़ी-थोड़ी देर बाद उस पर जीवन रक्षा की भावना से दृष्टिपात करते रहो। इस प्रकार तुम देखोगे कि साथी की वस्तु सड़ने लगी है, किंतु तुम्हारी वस्तु में सड़ने का जरा भी प्रभावित न होगा, हाँ यदि दृष्टिपात अधिक तेज हुआ तो सूखने लगेगी।

फ्रांस के बोर्डो नगर में इस संबंध में बहुत अन्वेषण हुआ। वहाँ एक स्त्री ने अपने शरीर में विशेष रूप से आकर्षण पैदा कर लिया था, जिस वस्तु पर दृष्टि डालती वह कदापि न सड़ती। केवल फल-फूलों पर ही नहीं, वरन् मरे हुए मेंढ़क, खरगोश, मछली, सुअर आदि की लाशों पर भी यह परीक्षण किया गया। सूक्ष्मदर्शक यंत्रों से हफ्तों उन लाशों की परीक्षा होती रही, पर सड़ने का एक भी चिन्ह उनमें न देखा गया। कई ऐसी सड़ी हुई वस्तुएँ उस स्त्री के सामने उपस्थित की गईं जिनमें असंख्य जंतु उत्पन्न हो गये थे। स्त्री ने जब उन पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि डाली तो वे कृमि कुछ ही देर में मर गये।

(६) लटकती हुई वस्तु को झुलाना

सुई के छेद में धागा पिरोकर ऊपर छत में इस तरह बाँध दो कि सुई बीच में लटकती रहे। उस कमरे में हवा के झोंके न आने पावें, इसका प्रबंध रखो, अब उस सुई से तीन फुट के फासले पर तुम बैठो और उस पर दृष्टि जमाओ। कुछ ही देर में उसमें हरकत होने लगेगी और जिस तरफ चाहोगे, वह उसी तरफ हटने व हिलने लगेगी। जलती हुई मोमबत्ती या दीपक की लौ को भी इसी प्रकार मानवीय विद्युत के आधार पर हिलाया-झुलाया जा सकता है।

(७) जीव-जंतुओं पर प्रतिबंध

रामायण में ऐसा उल्लेख है कि लक्ष्मणजी एक रक्षित रेखा खींच कर चले जाते थे और उसके अंदर सीताजी निर्भय होकर बैठी रहती थीं। जब रावण सीता को चुराने पहुँचा तो उसका इतना साहस न हुआ कि उस रेखा के अंदर प्रवेश कर सके, अतएव उसे भिक्षुक का रूप बनाकर छल से सीता को रेखा के बाहर बुलाने का षड्यंत्र रचना पड़ा। इस प्रकार की विद्युत रेखाएँ हर कोई खींच सकता है, परंतु उनमें असर अपने प्रयोक्ता के बल के अनुसार ही होगा। भूमि पर एक कोयले से कहीं छोटा-सा एक गोल घेरा चक्र की तरह खींच दो। खींचते समय उस रेखा में अपनी विद्युतमयी इच्छा का समन्वय कर दो और बैठकर तमाशा देखो। उधर से जो चीटिंयाँ या इसी प्रकार के छोड़े कीड़े निकलेंगे उनके लिए यह रेखा जलती हुई बालू के समान होगी। वे रेखा के समीप तक जाएँगे, किंतु उल्टे पाँव लौट आएँगे, उसे पार करते उनसे न बन पाएगा। यदि किसी छोटे कीड़े के आस-पास ऐसी रेखा खींच दी जाय तो उससे बाहर न निकला जाएगा, और उसी के अंदर ही घुमड़ता रहेगा। जब उसे कोई मार्ग न मिलेगा और अपनी जान हथेली पर रख लेगा, तब उस रेखा को पार करने को

उद्यत होगा। जब वह पार करेगा तो उसे बड़ा कष्ट होगा और निकलने के बाद ध्यान पूर्वक देखने से वह पीड़ित या पागल की तरह बेचैन दिखाई देगा।

(८) फोटो खींचना

फोटो खींचने के अच्छे प्लेट आते हैं, वे आँखों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं, किसी ऐसे अँधेर कमरे में जाओ जिसमें बाहर का प्रकाश बिल्कुल न पहुँचता हो और जिसमें प्लेट पर बाहरी प्रकाश लग जाने की आशंका न हो, उस कमरे में जाकर एक फोटो का प्लेट खोलो और दो मिनट तक उस पर अपने हाथ का पंजा रखे रहो, बाद में प्लेट को सावधानी से ढक कर फोटोग्राफर से धुलवालो। उस पर हाथ के प्रकाश का चित्र बन जाएगा।

(९) चौंका देना

कोई व्यक्ति किसी कार्य में व्यस्त हो, तो चुपके से उसके पीछे कुछ दूरी पर जाकर खड़े हो जाओ और रीढ़ की हड्डी या गर्दन का पिछला भाग जो खुला हो, उस पर दृष्टि जमाओ और उसे चौंका देने की भावना करते रहो। वह व्यक्ति कितने ही जरूरी काम में क्यों न लगा हो, अपना ध्यान हटाने को बाध्य होगा। उस स्थान को खुजलावेगा और वह मुड़कर तुम्हारी और देखने लगेगा।

(१०) विचार उत्पन्न करना

किसी व्यक्ति को ढीला शरीर करके शांत चित्त से आराम के साथ बिठा दो और उसके सामने तुम बैठो। जिस प्रकार के विचार उसके मस्तिष्क में उत्पन्न करना चाहते हो, उसी प्रकार की भावनाओं का प्रवाह उसके मस्तिष्क को लक्ष्य करके जारी करो। तुम्हारी विद्युत उसके मन में प्रवेश पाकर वैसे ही विचारों को उत्पन्न करेगी। किसी का मन यदि बहुत चंचल और कठोर होता है, तो वह उन

भावों को पूरी तरह ग्रहण नहीं कर पाता, फिर भी अधिकांश सफलता मिलती है। पूछने पर वह व्यक्ति उसी प्रकार के विचार उत्पन्न हुए स्वीकार करेगा, जैसे कि तुमने उसके लिए प्रेरित किए थे।

यह साधारण विद्युत की बात हुई। इतने अनुभव के लिए किसी विशेष अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती। हाँ, यदि स्वभावत: तुम्हारी विद्युत प्रबल है, तो अधिक स्पष्ट अनुभव आवेंगे और निर्बल होने पर उतनी ही त्रुटि रहेगी। अभ्यास से तो इस शक्ति को बहुत अधिक बढ़ाया जा सकता है। यह शक्ति समुन्नत होने पर जीवन को प्रकाश का पुंज बना देती है।

भोजन की आंतरिक पवित्रता

हिंदू समाज में खान-पान संबंधी छूत-छात का विशेष विचार रखा जाता है। पवित्र व्यक्तियों के हाथ का बना हुआ भोजन चौके में बैठकर ग्रहण करने की शास्त्रीय प्रथा का आज उपहास किया जाता है और जूता पहनकर कुर्सी, मेज पर बैठे हुए हीन स्वभाव के लोगों के हाथ का भोजन करना सभ्यता का चिह्न समझा जाता है। इस प्रकार के भोजन का गुप्त रूप से शरीर और मन पर तामसी प्रभाव पड़ता है, उसका दुखद परिणाम पीछे से भोगना पड़ता है।

थियोसोफिकल सोसायटी के प्रसिद्ध नेता महात्मा लेड बीटर ने "वस्तु की आंतरिक दशा" नामक एक बहुत ही विवेकपूर्ण पुस्तक लिखी है, उसमें वे एक स्थल पर कहते हैं-जो कुछ भोजन हम खाते हैं, वह पाचन के उपरांत शरीर का एक भाग बन जाता है। उस भोजन पर जिस प्रकार के सूक्ष्म प्रभाव अंकित होते हैं, वे भी हमारे शरीर में बस जाते हैं, किंतु वे यह भूल जाते हैं कि बाहरी सफाई पर ध्यान देना जितना आवश्यक है, उससे कहीं अधिक आवश्यक उसकी आंतरिक स्वच्छता पर ध्यान देना है। भारतवर्ष में भोजन की आंतरिक स्वच्छता को अधिक महत्त्व दिया जाता है। हिंदू लोग

अपने से नीच विचार के लोगों के हाथ का बना हुआ या उनके साथ बैठकर खाना इसलिए नापसंद करते हैं कि उनके हीन विचारों से प्रभावित होने से भोजन की पवित्रता जाती रहेगी। विलायत में लोग बाहरी सफाई को ही पर्याप्त समझते हैं, वे नहीं जानते कि केवल इतने से ही भोज्य पदार्थ उत्तम गुण वाले नहीं बन जाते।

भोजन पर उसके बनाने वाले का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। विज्ञान बताता है कि मानवीय विद्युत का सबसे अधिक प्रवाह उँगली की पोरुओं से प्रवाहित होता है। जिस भोजन को बनाते समय बार-बार हाथ से छुआ गया है, वह उसके अच्छे या बुरे विचारों से अवश्य ही प्रभावित होगा। यह सच है कि अग्नि पर पकने से उसके बहुत से दोष जल जाते हैं, तो भी वह संपूर्ण प्रभाव से रहित नहीं हो जाता। केवल छूने से ही भोजन पर वैयक्तिक असर नहीं पड़ता वरन पास बैठने वालों से भी वह आकर्षित होता है, क्योंकि भोजन मनुष्य की प्रिय वस्तु है और एक व्यक्ति जब दूसरे की थाली पर विशेष दिलचस्पी के साथ दृष्टि डालता है तो उस पर उसकी दृष्टि का असर पड़ता है। यदि कोई दु:खी होकर किसी को भोजन दे तो उसे खाने वाला जरूर रोगी हो जाएगा, ऐसा देखा जाता है कि किसी के हाथ से छीनकर या समाज में बैठकर दूसरों के दिये बिना खाता है वह भी उन खाद्य पदार्थों के साथ एक प्रकार की ऐसी विद्युत ले जाता है जो करीब-करीब विष का काम करती है और उससे वमन तक हो सकती है। एकांत स्थान में या चौके में बैठकर भोजन करना इस दृष्टि से बहुत ही अच्छा है कि उस पर भीड़-भाड़ की दृष्टि नहीं पड़ती। हाँ एक ही घर के या एक ही परिवार के विचार वाले लोग पास-पास बैठकर भोजन कर सकते हैं, क्योंकि उनमें एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति होती है और जातीय शील स्वभाव बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं, किंतु दूसरे लोगों में ऐसा नहीं हो सकता।

बनाने वाले या परोसने वाले के शारीरिक और मानसिक गुण तथा हाथों का परोसा हुआ रूखा-सूखा भोजन बाजार के हलुवे से अधिक गुणकारक होता है क्योंकि उनकी भावनायें भी उनमें लिपट आती हैं, शबरी के बेरों की श्रीरामचंद्रजी ने और विदुर के शाक की भगवान कृष्ण ने बड़ी प्रशंसा की है। यह प्रशंसा उनका मान बढ़ाने के लिए ही न थी, वरन सत्य भी थी। प्रेम की सद्भावनाओं में इतने रुचिर तत्त्व होते हैं कि उनसे साधारण भोजन भी बहुत उच्चकोटि का बन जाता है। होटलों में खाने वाले व्यक्ति हमेशा पेट की शिकायत करते रहते हैं। कहते रहते हैं कि होटलों में रोटी कच्ची मिलती है, शाक खराब मिलता है इसलिए वह हमें हजम नहीं होता, किंतु वास्तविक कारण दूसरा ही है। होटल वालों की नियत यह रहती है कि ग्राहक कम भोजन खावे, जिससे हमें अधिक लाभ हो, यह भावनायें भोजन के साथ पेट में पहुँचती हैं और ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करती हैं कि खाने वाले की भूख घट जावे। बाजारों में बिकने वाली मिठाइयाँ या अन्य दूसरी खाद्य वस्तुएँ प्रदर्शनार्थ रखी जाती हैं। रास्ता निकलने वाले अधिकांश लोगों का मन उन्हें देख कर ललचाता है, परंतु वे कारणवश उन्हें खरीद नहीं सकते। कई बार छोटे बच्चे और गरीब लोग उनकी ओर मन मारकर दु:खी होते हुए चले जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों की यह बेबसी भरी इच्छायें उस मिठाई आदि में प्रचुर मात्रा में लिपट जाती हैं। अनेक मनुष्यों की ऐसी भावनाओं को वह बाजारू भोजन अपने में इकट्ठा करता रहता है और कुछ समय उपरांत उनका एक बोझ जमा हो जाता है और उसे पूर्णतः अखाद्य बना देता है। "बाजारू भोजन से बीमार पड़ते हैं", यह अनुभव बिलकुल सत्य है। इसका कारण और कुछ नहीं हो सकता। घृत, मिष्ठान जैसी बलवर्द्धक वस्तुओं से बने हुए पदार्थ भी हानि पहुँचावें तो इसका भला और क्या कारण होगा?

एक साथ, एक थाली में या खाने से शेष बचा हुआ झूठा भोजन करना तो बहुत ही घृणित है, लार का कुछ अंश जिसमें सम्मिलित हो जाय ऐसा भोजन देखते ही मन को घृणा उत्पन्न होती है। कहते हैं कि इससे प्रेम उत्पन्न होता है, इस कथन में कुछ सच्चाई तो है, पर वह लाभ हानि की तुलना में कुछ न कुछ के बराबर है। एक व्यक्ति का शारीरिक अंश (थूक लार) आदि दूसरे के शरीर में पहुँच जाता है, तो उसे अपनी जाति के शरीर को अपनी ओर आकर्षित करता है। परंतु जब तक गुण, स्वभाव आदि भी एक से न हों तब तक वह प्रेम स्थायी नहीं हो सकता। जैसे पिचकारी से शरीर में पहुँचाये हुए दूसरे व्यक्ति के खून की ताकत एक नियत समय में जाकर समाप्त हो जाती है, उसी प्रकार एक थाली में भोजन करने से जो थूक आदि दूसरे के शरीर में पहुँचता है, वह थोड़े समय में ही समाप्त हो जाता है। यह प्रेम बहुत ही हल्का उत्पन्न होता है। साथ ही दूसरे के भले-बुरे विचार भी प्रवेश कर जाते हैं। बुरे विचार अधिक तीव्र होते हैं इसीलिए सबसे प्रथम उन्हीं का असर होता है। कई बार इससे छूत वाले संक्रामक रोगों का एक-दूसरे पर आक्रमण होने का अंदेशा रहता है। इसलिए हर व्यक्ति को सदैव अलग-अलग पात्रों में भोजन करना चाहिए।

यदि अन्य व्यक्तियों के यहाँ या अपने से भिन्न प्रकृति के लोगों के यहाँ भोजन करने का अवसर आवे तो अच्छा है कि उनके यहाँ प्रयोग होने वाले धातुओं के बर्तन प्रयोग में न लाये जावें। धातुएँ अपने प्रयोगकर्ता के दोषों को बहुत ही शीघ्रता से प्रचुर मात्रा में अपने अंदर धारण कर लेती हैं और जब तक अग्नि में न तपाया जाय तब तक शुद्ध नहीं होतीं। कई बार अपने से बहुत भिन्न स्वभाव के मनुष्यों के द्वारा बहुत काल तक प्रयोग किये हुए पात्र उनकी भावनाओं को इतना अधिक ग्रहण कर लेते हैं कि बार-बार तपाने पर

भी अपना असर नहीं छोड़ते। इसलिए दूसरे ऐसे लोगों के यहाँ, जहाँ अपने विचारों का सामंजस्य नहीं होता यदि थाली, गिलास लेने की अपेक्षा पत्तों की पत्तल एवं मिट्टी के गिलास, कुल्लड़, मटके काम में लाये जावें तो बहुत ही अच्छा है, क्योंकि यह एक बार ही प्रयोग होते हैं।

मुँह और हाथ धोकर भोजन करना चाहिए, जिससे उनमें आये हुए दुर्भाव छूट जायें। चूल्हे के पास चौके में भोजन करने से वहाँ का उष्ण वातावरण बुरे प्रभावों को बहुत कुछ दूर कर सकता है। कपड़ों की अशुद्धि भोजन तक उड़कर न पहुँचे इसलिए जितने कम हो सकें उतने कम कपड़े खाते समय पहनने चाहिए। बैठने का स्थान पवित्र हो। परोसने वाले जहाँ तक हो सके भोजन को कम से कम हाथ से छुएँ, जल आदि प्रवाही पदार्थों को बार-बार छूना, उनमें हाथ उँगली डालना तो बहुत ही बुरा है, क्योंकि सूखे पदार्थों की अपेक्षा प्रवाही पदार्थ बहुत जल्द विद्युत प्रवाह को अपने अंदर धारण कर लेते हैं। स्वयं अपने हाथ से तैयार किये हुए पदार्थ सर्वोत्तम हैं अपने बाद अपने प्रिय परिजनों या सामान विचार वालों का बना हुआ। भिन्न स्वभाव के मनुष्यों के यहाँ भोजन का अवसर आये तो सूखा भोजन लेना चाहिए, क्योंकि उनमें बाहरी पदार्थों का समावेश देर में और कम होता है। दूध या उससे बने हुए प्रवाही पदार्थ प्रतिकूल विचार वालों से कदापि न लेने चाहिए क्योंकि दूध जल से भी अधिक सजीव होने के कारण अत्यधिक प्रभाव को ग्रहण कर लेता है।

वस्तुओं पर गुप्त रूप से बहुत दूर तक के संस्कारों का प्रभाव बना रहता है। छुआ-छात के प्रभाव अग्नि पर पकाने से नष्ट हो सकते हैं, किंतु बलात् अपहरण किया हुआ या भिक्षा द्वारा प्राप्त किया हुआ जो अन्न होगा वह अपने उन संबंधियों की भावनाओं को अग्नि पर पक जाने के उपरांत भी न छोड़ेगा। पशु को वध

करके निकाले गये चमड़े को चाहे कितना ही पकाया जाय, चाहे उस पर कितना ही रंग रोगन किया जाय, वह उस प्रभाव का कदापि परित्याग न करेगा, जो मरते समय पशु को भयंकर यंत्रणा के कारण उस पर पड़ा था। हत्या करके किसी पशु के शरीर से निकाला गया मांस या चमड़ा उसके उपयोग करने वालों को छोड़ नहीं सकता। इसलिए जो कुछ हम खावें उसमें यह भी देख लें कि यह पदार्थ कहीं वेदनामय भावों से भरा हुआ तो नहीं है। फूँका प्रथा से या पीट-पीट कर निकाले गए पशु-दुग्ध से भला कौन लाभ की आशा कर सकता है ?

बहुत से विद्वान और साधुजन भोजन के समय छुआ-छूत का विशेष ध्यान रखते हैं। मेडम बमेव्हटस्की की सम्मति है कि अपना भोजन और जल पात्र अधिक लोगों की छूत में मत आने दो। भोजन बनाने वाले या परोसने वाले को पहले भोजन करा देना चाहिए, ताकि वह कुड़कुड़ाते हुए पेट की इच्छाओं को उस पर न डाल दे। उससे यह भी कह दो कि जहाँ तक हो सके हाथ से कम छुए और जहाँ जरूरत हो वहाँ चिमटा या चम्मच का प्रयोग कर ले। यहाँ बाहरी सफाई का खंडन नहीं किया जा रहा है, जरूरी वह भी है, परंतु भोजन की आंतरिक सफाई तो बहुत ही आवश्यक है।

भोजन के कई प्रकार के प्रभावों को हम अपनी इच्छा शक्ति द्वारा भी दूर कर सकते हैं। जब थाली सामने आये तो थोड़ा सा जल लेकर उसके चारों तरफ फेर दो और एक मिनट तक आँखें बंद करके इस सामग्री को परमात्मा को समर्पण करते हुए मन ही मन प्रार्थना करो कि "हे प्रभो!" यह भोजन आपको समर्पित है। इसे पवित्र और अमृतमय बना दीजिए।" जब नेत्र खोलो तो विश्वास करो कि तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार कर ली गयी है और उसमें अब केवल लाभकारी तत्त्व ही रह गये हैं। सच्चे हृदय से प्रभु की प्रार्थना करके

उसमें पवित्रता एवं अमृतत्त्व की भावना के उपरांत जो भोजन किया जाता है, वह बहुत से हानिकारक प्रभावों से मुक्त हो सकता है और स्वास्थ्य की उन्नति में सहायक हो सकता है।

जड़ वस्तुओं पर प्रभाव

मनुष्य की नस-नस में व्याप्त यह विद्युत शक्ति केवल शरीरधारी चैतन्य प्राणियों पर ही असर नहीं डालती, वरन् निर्जीव और जड़ कहे जाने वाले पदार्थों पर भी असर करती है। इटावा जिले के कलक्टर डॉ० एस०एस० नेहरू ने 'इलैक्ट्रिक कल्चर' पद्धति से एक विशाल पैमाने पर निरीक्षण करके सिद्ध किया है कि चुंबक की विद्युत धारा का पौधों और वृक्षों पर बड़ा ही आश्चर्यजनक प्रभाव होता है। उन्होंने लोहे की जाली द्वारा वृक्षों को और पानी के साथ खेती की फसल को बिजली की सहायता पहुँचायी, तो पाया कि वे पौधे दूसरे अन्य पौधौं की अपेक्षा बहुत अधिक उन्नति कर गये और उनका विस्तार एवं फलने-फूलने का परिणाम बहुत ही संतोषजनक रहा। उपरोक्त डॉ० साहब ने अपना काम केवल यहीं तक सीमित नहीं रखा, वरन् पर्याप्त प्रमाणों सहित यह भी साबित किया कि चुंबक शक्ति का पानी पिलाकर या अन्य प्रकार से बिजली की सहायता पहुँचाकर कठिन से कठिन रोगों को अच्छा किया जा सकता है। उन्होंने बच्चों के गले में ताँबे के तार या ताँबे के ताबीज विद्युतान्वित करके पहनाए, फलस्वरूप दाँत निकलने के कष्ट तथा अन्य प्रकार की उनकी बीमारियाँ अच्छी हो गयीं। यह प्रयोग उन्होंने उस मामूली से मैग्नैट यंत्र की सहायता से किये थे, जो हलकी सी ताकत का होता है और मोटर आदि में लगा होता है। मनुष्य की शारीरिक चुंबक शक्ति उसकी अपेक्षा बहुत ही सूक्ष्म और गुणकारी प्रभाव रखती है। देखा गया है कि जिन वृक्षों के नीचे मनुष्यों या पशुओं का रहना होता है, वे बहुत बढ़ते और फलते-फूलते हैं। बाग

के फूलदार पेड़ों में जैसे खाद, पानी आवश्यक होता है, उसी तरह मनुष्य शरीर की गर्मी भी आवश्यक है अन्यथा उनकी फसल बहुत कमजोर हो जाती है, जिन खेतों पर किसानों के झोंपड़े होते हैं और वे कभी-कभी बैठते हैं, उसके आस-पास की खेती की हालत बहुत अच्छी होती है। देखा गया है कि कुछ वृक्ष जो मुरझाई हुई हालत में थे और सूखना ही चाहते थे, उनके नीचे जब मनुष्य और पशुओं का निवास हुआ तो वे कुछ ही दिनों में नवीन पल्लवों से लद गये। हर किसान जानता है कि जंगलों में सुनसान पड़े रहने वाले खेतों की अपेक्षा गाँव के निकटवर्ती खेतों की पैदावार अच्छी होती है। कारण यही है पौधों की कोंपल साग के लिए तोड़ ली जाती हैं, तो इससे आपकी फसल को नुकसान नहीं होता, क्योंकि हाथ के स्पर्श से उतना लाभ पहुँच जाता है, जितनी हानि उन कोंपलों के काटने से नहीं होती। इसके विपरीत यदि किसी हँसिये से उसे काटा जाय तो अवश्य ही पौधे फिर उतने न बढ़ेंगें।

मकानों पर मनुष्य के रहने का प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। एक मकान में कोई मनुष्य न रहे और खाली पड़ा रहे तो बहुत जल्द उसकी दशा खराब हो जायेगी और कम समय में रद्द हो जावेगा, किंतु दूसरा मकान जिसमें मनुष्य रहते हैं, इतनी जल्दी खराब नहीं हो सकता । मोटे तौर पर देखने में वह मकान जल्दी खराब होना चाहिए, जिसमें लोग रहते हैं; क्योंकि प्रयोग करने पर हर चीज जल्दी टूटती है और जो चीज काम में नहीं आती, वह ज्यादा दिन चलती है, परंतु यहाँ उल्टा ही दृष्टिगोचर होता है, इसका कारण मानवीय विद्युत का चमत्कार है। मनुष्य की बिजली जड़ पदार्थों में भी बल का संचार करती है। मकानों में दीर्घ जीवन के साथ-साथ उसके मालिकों के विचारों का वातावरण भी गूँज जाता है। जिस घर में जैसी प्रकृति के लोग रहते हैं उनके विचारों की श्रृंखला उस स्थान

से गुंजित हो जाती है। ये लोग चले जायँ तो भी बहुत काल तक उनके गुण, स्वभाव वहाँ डेरा डाले रहते हैं। जिसे आध्यात्म तत्त्व की थोड़ी भी जानकारी है, वह किसी भी मकान में प्रवेश करते ही बता सकता है कि यहाँ पर कैसे स्वभाव के लोगों का रहना होता है या हुआ था। भले विचारों से परिपूर्ण मकान में प्रवेश करते ही एक शांति, शीतलता का अनुभव होता है। जिन स्थानों में बुरे विचारों के लोग रहे हैं, वहाँ अपने मन में भी उस तरह की तरंगों का प्रादुर्भाव होने लगता है। जिस घर में दुराचारी लोग रहे हैं तुम उस स्थान पर कुछ समय रहकर देखो तो तुम्हारे मन में जिस प्रकार के भाव कभी नहीं उठते थे, उस तरह के वहाँ उठेंगे। जिस स्थान पर कोई भयंकर या वीभत्स कार्य हुए हैं, उन जगहों का वातावरण मुद्दतों तक नहीं बदलता। जिन मकानों में अग्निकांड, भ्रूण हत्या, कत्ल या ऐसे ही जघन्य कार्य हुए हैं, उन घरों की ईंटें रोती हैं और उन स्थानों पर सताये गये प्राणी की करुणा कभी-कभी जागृत होकर बड़े डरावने दृश्य या स्वप्न उपस्थित करती है। किन्हीं घरों का अभागा या भुतहा होना प्रसिद्ध होता है, उनमें जो कोई रहता है, उन्हें कष्ट होता है, डर लगता है या अन्य उपद्रव होते हैं। ऐसे स्थानों के संबंध में उनके कुछ पहले का इतिहास तलाश किया जाय तो जरूर कोई खटकने वाली घटना उस घर में हुई होगी। कोई मनुष्य अत्यंत ही शारीरिक और मानसिक कष्टों से कराहता हुआ उसमें पड़ा रहा होगा या उस स्थान पर किसी की हाय पड़ी रही होगी। उग्र मानसिक अनुभूतियाँ जिन स्थानों में मँडराती रहती हैं, उनमें रहने वाले सुख से नहीं रह सकते। प्रबल मनस्वियों को छोड़कर साधारण कोटि के मनुष्यों का कलेजा उसमें काँपता रहता है।

बहुत दिनों तक खाली पड़े रहने वाले मकानों में उससे किसी समय विशेष मनोयोग से रहे हुए व्यक्तियों के विद्युत कण जागृत हो

उठते हैं। चूँकि मनुष्य शरीर के एक-एक कण में स्वतंत्र सृष्टि रच डालने की शक्ति भरी हुई है। जब उसके लिए किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती तो वे अवसर पाकर अपने पूर्व रूप की भूमिका में एक स्वतंत्र अव्यक्त व्यक्ति की रचना करने लगते हैं। एक कण का एक अव्यक्त शरीर बन सकता है। कोई मृत व्यक्ति चाहे वह अन्यत्र जन्म ले चुका हो, फिर भी उसके पिछले कण यदि जागृत होने की स्थिति में आ जायें तो वे प्रकट हो सकते हैं। मृतात्मायें, भूत, प्रेत, पिशाच, बेताल अक्सर किसी भूतपूर्व व्यक्ति के थोड़े से विद्युत परमाणुओं की एक स्वतंत्र सृष्टि होती है। बहुत सी बातें उनमें अपने पूर्व रूप से मिलती-जुलती होती हैं और बहुत सी बिल्कुल स्वतंत्र होती हैं। इस प्रकार से बने हुए भूत-प्रेतों के लिए यह आवश्यक नहीं कि उनके सारे स्वभाव और सारा ज्ञान पूर्व शरीर की भाँति हो।

यह बताया जा चुका है कि बहुत दिनों से खाली पड़े मकानों में ऐसे विद्युत कण अक्सर मूर्तिमान होते हैं। यह जरूरी नहीं है कि यह अव्यक्त प्रतिमायें उसी मनुष्य की हों जो उसमें रहा हो। इधर-उधर उड़ते-उड़ाते कोई बीज कण वहाँ ठहर जाये और उपयुक्त अवसर पा जावे तो उस स्थिति तक विकास कर सकता है, जिसे लोग कभी-कभी-प्रेत के रूप में देखने या मानने लगते हैं। यह प्रतिमायें कई-बार अपने पूर्व स्मरण की भूमिका जाग पड़ने पर वैसी ही क्रिया दुहराने लगती हैं। जैसे उसे पूर्व काल में गाने का शौक रहा हो तो इस समय भी गाने लगे। खाली पड़े मकान में थोड़े से व्यक्ति यदि आकर रहें तो उनके शरीर की भाप उन प्रतिमाओं को गर्मी देती है, फलस्वरूप वे अधिक सक्रिय हो जाती हैं और अपने कार्यों को अधिक वेग से दुहराने लगती हैं, किंतु यदि अधिक व्यक्ति वहाँ आकर रहें

तो उनकी बढ़ी हुई गर्मी उन प्रतिमाओं को खदेड़ बाहर करती है। जब ऐसी घटनाएँ उपस्थित हों कि अमुक स्थान में भूत दीखा या उसकी अमुक हरकत हुई तो समझना चाहिए कि किसी जीवित या मृत व्यक्ति का कोई विद्युत कण चैतन्य प्रतिमा के रूप तक विकास कर चुका है। यह प्रतिमायें यदि बहुत ही अधिक कठोर न हों, तो आसानी से हटाई जा सकती है। घर की पूरी सफाई अग्नि की गर्मी अधिक लोगों का निवास उन्हें हटाने पर मजबूर कर सकता है।

सर्वत्र स्त्रियाँ जेबर पहनना पसंद करती हैं और उससे सौंदर्य में वृद्धि होती है। विज्ञान बताता है कि वायु के साथ आकाशीय विद्युत की एक धारा भी बहती रहती है। इसमें मनुष्य शरीर को पोषण करने का बड़ा गुण है। धातुओं में बिजली को खींचने का गुण है। स्थूल और सूक्ष्म का भेद इस आकाशीय विद्युत में भी है, लोहे, पीतल या ऐसी सस्ती वस्तुओं का सस्तापन उनके रंग रूप के कारण नहीं, वरन् सूक्ष्म और उपयोगी विद्युत प्रवाह ग्रहण करने की दृष्टि से है, अन्यथा यदि यह बात न होती तो चाँदी की अपेक्षा लोहा अधिक मँहगा होता क्योंकि उपयोगिता चाँदी से अधिक है इसी प्रकार सोने से निकिल धातु मँहगी होती, क्योंकि उसकी चमक सोने से भी अच्छी होती है। चाँदी और सोना आकाश की सूक्ष्म बिजलियों को आकर्षित करते हैं। चाँदी द्वारा शीतलता, गंभीरता और मंदता उत्पन्न होती है। स्त्रियों की बढ़ी हुई काम शक्ति को घटाने के लिए चाँदी के जेबर पहनाने चाहिए पैरों में चाँदी के भारी कड़े पहन कर विधवाएँ अपने सतीत्व की रक्षा आसानी से कर सकती हैं। जिनके पति परदेश में हों, ऐसी स्त्रियों को भी चाँदी के कुछ जेवर जरूर पहनने चाहिए, जिससे उनका मन शांत रहे। सोना उत्साह, तेज और चमक प्रदान करता है। चेहरे पर तेज या चमक होना स्त्रियाँ विशेष रूप से पसंद करती हैं।

इस दृष्टि से नाक कान में कुछ पहनना अच्छा है। कान के निचले भागों में ही सोना पहनना चाहिए जिससे कनपटी और गालों से संबंध रखने वाली मांस पेशियों से छूता रहे। कान के ऊपरी भाग में सोना पहनने से उसका संपर्क मस्तिष्क की ऊपर की मांस पेशियों से होता है, जिससे चित्त में चंचलता उत्पन्न होती है। धातुएँ अपने आकर्षण से आकाश की उपयोगी बिजली खींचकर पहने हुए शरीर में देती हैं। इससे न केवल सौंदर्य की, वरन् स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। ताँबा भी सोने जैसा ही गुणकारी है, परंतु न जाने उसके जेबर क्यों नहीं पहने जाते। सोने के पोले जेवर जिनके अंदर लाख आदि भरवाई जाती है, यदि ताँबा भरवा दिया जाय तो गुणों वह में सोने के समान ही रहेगा। सोने में थोड़ा ताँबा मिलाकर "गिन्नी गोल्ड" जैसी मिश्रित धातु के जेबर और भी उत्तम होंगे। छाती, हृदय, कंठ के आस-पास कोई जेवर पहनना हृदय को बल देता है। पुरुष जो खुद जेवर पहनना ठीक नहीं समझते यदि सोने या ताँबे की एक अँगूठी पहने रहें तो अच्छा है। ताँबे और चाँदी के तारों से गुँथी हुई अँगूठी सात्विक विचारों को आकर्षित करती है। उचित मात्रा में अष्ट धातुओं के मिश्रण से बने हुए जेबर एक प्रकार से जीवित मैग्नेट हैं। अष्ट धातुओं के जेबरों में बहुत ऊँची आकर्षण धारा होती है। परंतु स्मरण रहे, अष्ट धातु का कोई बहुत बड़ा जेबर न पहना जाय अन्यथा निद्रा, नाश, रक्त, पित्त, उन्माद जैसे रोग हो सकते हैं। उनका लाभ अँगूठी जैसे छोटे जेबर पहनने में ही है।

रुपये पैसे अनेक हाथों में चलते रहते हैं, हर आदमी उन्हें प्यार करता है और साथ ही अपनी लालसाएँ उस पर लपेट देता है। कई बार तो वे ऐसे दुःखी लोगों के हाथ में होकर निकलते हैं जो उसे छोड़ना नहीं चाहते, पर मजबूरन छोड़ना पड़ता है। उनकी बेबसी पैसों पर चिपक जाती है। निर्दयतापूर्वक यदि अपहरण किया गया हो

तो वह धन अपने पूर्व रक्षक की करुणा से परिप्लावित हो जाता है। ऐसी विचित्र प्रकार की अंतर्भावनाओं की मोटी ताजी गठरी हर एक सिक्के की पीठ पर जमा रहती है। कहते हैं कि एक रुपये में एक सेर गर्मी होती है। यह बात विनोद या उपहास की दृष्टि से ही नहीं कही गई है, इसमें कुछ सच्चाई भी है। उन अनेक प्रकार के विचारों का जमघट हर क्षण कुछ-न-कुछ काम करता रहता है। जब जेब भरी होगी तो बीस शैतानियाँ सूझेंगी, किंतु खाली हाथ होने पर मन की दूसरी ही दशा हो जाती है। समस्या पर विचार करना चाहते हो तो, या भजन-पूजन करना चाहते हो तो आवश्यक है कि अपने शरीर के आस-पास रुपया पैसा न रखो अन्यथा मन उछलता रहेगा और एक स्थान पर स्थिर न रहेगा और बुद्धि द्वारा किसी गहन समस्या पर ठीक निर्णय न ले सकोगे। जरूरत भर पैसे जेब में रखकर शेष पैसा अन्यत्र रख देना चाहिए। रात को सोते समय और शरीर पर पहने हुए किसी वस्त्र की जेब में रुपया पैसा मत रखो और न चारपाई पर ही उन्हें रखकर सोओ अन्यथा अच्छी नींद न आवेगी और बुरे स्वप्न दिखाई देंगे। रत्नों में तो यह ग्राहक शक्ति और भी अधिक होती है। जो वस्तु जितनी मूल्यवान होगी उस पर उतना ही मनुष्य का लालच होता होगा। इसलिए पैसों की अपेक्षा रुपया और रुपया की अपेक्षा रत्न अधिक बोझ लादे होते हैं। रत्न धनवानों के पास रहते हैं और देखा जाता है कि धनवानों का निकटवर्ती वातावरण अधिक पापमय रहता है। इस वातावरण से वे रत्न भर जाते हैं। कभी-कभी अधिक पापी या क्रूर कर्मा के पास कोई रत्न रहे या किसी कृपण से बलात् छीना गया हो तो वह उन्हीं भावनाओं से भर जाता है। इसलिए रत्नों का शुभ अशुभ होना प्रसिद्ध है। कोई रत्न शुभ होते हैं, उनके पास रखने से सुख संपत्ति बढ़ती है और कोई बहुत ही अशुभ होते हैं इसलिए लोग रत्नों की परीक्षा करके ही उन्हें अपने

यहाँ रखते हैं। शुभ अशुभ तो रुपया पैसा भी होते हैं पर वे अधिक देर ठहरते नहीं, जल्दी-जल्दी एक हाथ से दूसरे हाथ में चलते रहते हैं, इसलिए न तो उनका परीक्षण ही हो पाता है और न असर ही मालूम पड़ता है। दूसरे इन सिक्कों के मूल्य के अनुसार उनमें प्रभाव भी कम होता है। जो जितना कीमती सिक्का होगा और जितने समय तक एक स्थान पर रहेगा, उसका उतना ही अधिक प्रभाव भी होगा। इस शुभ अशुभ का कारण उनके पूर्व रक्षकों केविचार ही हैं।

पुराने लोग जेबर गिरवी रखने का व्यवसाय बुरा बताते हैं। ऐसे असंख्य उदाहरण पाये जाते हैं कि जेबर गिरवी रखने का व्यवहार करने वाले फलते-फूलते नहीं और सदा किसी न किसी कष्ट से दु:खी रहते हैं। कारण यह होता है कि अधिकांश जेबर स्त्रियों के पहनने के होते हैं और वे बहुत दु:खी होकर देती हैं और भविष्य में भी जब तक वे उन्हें वापस न मिलें तब तक दु:खी बनी रहती हैं और यह दु:ख भरी इच्छाएँ अपनी इष्ट वस्तु के पास पहुँचती हैं और उस पर लगातार लदती रहती हैं। धातुओं में विद्युत शक्ति को अत्यधिक मात्रा में ग्रहण करने का गुण होने के कारण वे इन इच्छाओं को पूरी तरह अपनाए रहती हैं। इस प्रकार वे दु:ख भरे विचार जिस व्यक्ति की आधीनता में रहेंगे वे उसे अपने प्रभाव से प्रभावित किए बिना कदापि न छोड़ेंगे। इसी कारण ज़ेबर या थाली, बर्तन आदि घर गृहस्थी के काम आने वाली चीजें जो लोग गिरवी रखते हैं, देखा गया है कि वे दु:खी रहते हैं और किसी न किसी प्रकार की आपत्ति में फँसे रहते हैं।

खोटे सिक्के जिस आदमी के पास पहुँचते हैं उसे ही झुँझलाहट आती है, उन्हें चलाने के लिए वह कपटपूर्ण युक्ति सोचता है, देने वाले के प्रति क्रोध करता है, अपनी बेवकूफी पर पछताता है, आर्थिक क्षति के कारण दु:खी होता है, यह सब भावनायें उन खोटे

सिक्कों पर जमा होती हैं। चूँकि वे जल्दी नहीं चलते, बड़े प्रयत्न के बाद किसी को दिए जाते हैं, साधारणतः कई दिन तक एक आदमी के पास रहते हैं और वह उसकी बनावट को बार-बार विशेष दृष्टिपात से देखता है, इसलिए वह दुःख की भावनायें और भी अधिक जमती हैं। इस प्रकार वह खोटे सिक्के और भी अधिक दुःखदायी हो जाते हैं। सहृदय व्यक्तियों को उचित है कि उनके पास कोई खराब सिक्का आ जावे तो स्वयं हानि उठाकर उसे नष्ट कर दें, आगे न चलने दें क्योंकि वह जितना ही अधिक जियेगा, उतना ही जन समाज को हानि पहुँचायेगा।

कपड़े शरीर के सबसे अधिक निकट संपर्क में रहते हैं, इसलिए जड़ होते हुए वे पूरी तरह प्रभावित हो जाते हैं। किसी का पहना हुआ कपड़ा पहनना ऐसा ही है जैसा उसका झूंठा भोजन खाना। एक पौराणिक कथा है कि देव गुरु वृहस्पति की कन्या देवयानी ने एक दूसरी लड़की शर्मिष्ठा के कपड़े पहन लिए थे, इसलिए उसे जीवन भर गुलाम बनकर रहना पड़ा था । पुरानी चीजें बेचने वालों की दुकान से उतरे हुए कपड़े सस्ते दामों में खरीदकर लोग पहनते हैं और अपनी बुद्धिमानी पर प्रसन्न होते हैं, उन्हें जानना चाहिए कि यह कार्य उनकी शारीरिक और मानसिक तंदुरुस्ती के लिए बहुत ही बुरा है। जिस आदमी के व्यक्तित्व के संबंध में आप नहीं जानते, उसके विचारों और स्वभाव से लदे हुए कपड़ों को क्यों पहनते हैं ? आपके मन पर यदि किसी के बुरे स्वभाव की छाप पड़ी तो यह उससे भी बुरा होगा क्योंकि शरीर की बीमारी तो थोड़े दिनों में ठीक हो जाती हैं, किंतु मन के ऊपर पड़े अनिष्टकर प्रभाव जन्मभर दुःख देते हैं और आगामी जन्मों के लिए विरासत में मिलते चले जाते हैं। चाहे फटे कपड़े पहनिए,

कम कपड़े पहिनए, परंतु दूसरों के झूठे कपड़े तो मत पहनिए, यह तर्क ठीक नहीं है कि अच्छे स्वभाव के लोगों के कपड़े तो पहन लें। हो सकता है कि तुम्हें इससे कुछ लाभ पहुँचे, परंतु इसकी भी क्या गारंटी है कि जिसे तुम अच्छा समझते हो उसके मन में बुरे भाव नहीं हैं या उसे कोई गुप्त रोग नहीं है ? फिर मनुष्य का स्वाभाव कहता है कि कोई कितना भी बड़ा आदमी क्यों न हो, क्यों उसका झूंठा खाया जाय, क्यों उसका झूंठा पहना जाय ?

रेशमी और ऊनी वस्त्र बहुत कम प्रभाव ग्रहण करते हैं इसलिए पूजा आदि पवित्र कामों में प्रयोग किया जा सकता है। कहीं शुद्ध स्थानों में जाना हो और बदलने की सुविधा न हो तो रेशमी या ऊनी कपड़े पहन सकते हैं। जैसा कि लोग अक्सर मृतक दाह के बाद रेशमी कपड़ा पहनते हैं। कपड़ों को धूप में खूब तपाने से और गर्म पानी में उबालने से उनका मैल और मोटे दोष दूर हो जाते हैं। जिन लोगों को हम रोज छूते हैं, उनके प्रभावों को भी थोड़ा बहुत ग्रहण कर लेते हैं, इसलिए अपने वस्त्रों को नित्य धोकर स्वच्छ कीजिए और धूप में तपाकर तब पहनिए।

विचारों की बिजली

हमारी मानसिक विद्युत में से प्रतिक्षण जो लहरें उठती रहती हैं, उन्हें विचार नाम से पुकारते हैं। विचार केवल एक शब्द नहीं है, वरन् एक मूर्तिमान पदार्थ है, जिसे वैज्ञानिक यंत्रों की सहायता से प्रत्यक्ष देखा जाने लगा है। अमेरिका में ऐसे फोटो खींचने के कैमरे बना लिए गए हैं, जो विचारों की तस्वीरें साफ-साफ खींच लेते हैं। तुम जिस वस्तु का चिंतन कर रहे हो, उसी वस्तु के समान मानस चित्र बनने लगते हैं। उन यंत्रों की सहायता से स्थूल वस्तुओं की भाँति उन चित्रों का भी फोटो खिंच जाता है। विचार हर घड़ी मस्तिष्क में से निकल कर

बाहर की ओर उड़ते रहते हैं, उन उड़ते विचारों की तस्वीर ठीक वैसी ही आती है, जैसी कि मनुष्य की कल्पना हो।

तुमने पानी में उठती लहरें देखी होंगी, यह चाहे किसी जगह से उठी हों पर समाप्त वहीं जाकर होंगी जहाँ पर पानी का अंत होगा। पानी का अंत चाहे कितनी ही दूर हो वह बराबर बहती रहेंगी और जब किनारे पर पहुँच जाएँगी तो पृथ्वी की आकर्षण शक्ति उसके वेग को अंदर खींच लेगी। विचार भी मानसिक विद्युत की लहरें हैं और यह विश्व ब्रह्मांड में व्याप्त आकाश (ईथर) तत्त्व में उठती हैं। आकाश अनंत है, उसका कहीं अंत न होने के कारण उन लहरों का भी कहीं अंत नहीं होता और वे निरंतर बहती ही रहती है। विचार विभिन्न प्रकार के होते हैं, उस भिन्नता के कारण उनके रंग रूप में भी अंतर आ जाता है। इसलिए वे सब आपस में मिल-जुलकर एक नहीं हो जाते, वरन् अलग-अलग बने रहते हैं। हाँ एक समान विचार दूर-दूर से इकट्ठे होकर घने होते रहते हैं, जैसे अलग-अलग स्थानों पर भाप एक जगह जमा होते-होते बादल बन जाती है। बिजली में आकर्षण शक्ति भी होती है, इसलिए यह विचार एक-दूसरे को खींचते रहते हैं। तुम जैसे विचार करते हो, मस्तिष्क में उस जाति की आकर्षण शक्ति पैदा होती है और वह उसी प्रकार आकाश में उड़ने वाले विचारों को पकड़कर अपने अंदर खींच लेती है। इसलिए जो बात तुम सोचते हो उसके संबंध में बहुत सी नई बातें मालूम कर लेते हो, इसका कारण है कि उस प्रकार का विचार कभी किन्हीं व्यक्तियों ने किया होगा और उनका अनुभव जो उड़ता फिर रहा था, तुम्हें मिल गया। परोपकार और भलाई के विचार करने से वैसे ही विचारों का जमाव होता है और हृदय बड़ी शांति तथा शीतलता अनुभव करता है। इसके विपरीत क्रोध, घृणा, पाप, कपट के विचार करने पर वे भी

अपनी जाति वालों को बुला लेते हैं और वे अपने दाहक गुणों के कारण मन को बैचेन बना बना देते हैं। कई महापुरुष प्रत्यक्षतः संसार की भलाई का कोई अधिक काम नहीं करते, परंतु वे उच्चकोटि की पवित्र विचारधारा संसार में प्रवाहित करते रहते हैं, तदनुसार जनता को इतना लाभ पहुँचता है, जितना हजार आदमियों के शारीरिक कार्यों से नहीं हो सकता। अनेक महात्मा पर्वतों की कंदराओं में तप करते रहते हैं, यह न सोचना चाहिए कि वे अपनी मुक्ति या स्वर्ग कामना के लिए परिश्रम कर रहे हैं। असल में तप द्वारा वे अपनी आत्म विद्युत को बहुत तीव्र करते रहते हैं और उसके द्वारा अपने पवित्र विचारों को ब्रॉडकॉस्ट करते रहते हैं और जिन्हें सांसारिक मनुष्य अपने मानस रेडियो यंत्रों पर भली प्रकार सुन सकें। महात्मा गाँधी स्वतंत्रता आंदोलन के लिए ज्यादा तादाद में सेवक नहीं चाहते थे, वे कहते थे कि पर्याप्त आत्म शक्ति वाले थोड़े से आदमी हों तो भी सफलता मिल सकती है। जो आदमी चाहे जैसे उलटे सीधे विचार करते रहते हैं, उन्हें जानना चाहिए कि बुरे विचार अपनी जाति वालों को बुलाकर तुम्हारे ऊपर लाद देंगे और जीवन को बड़ा दुःखमय बना देंगे। पापपूर्ण इच्छा करने से उसका असर दूसरों के लिए उत्पन्न होता है। इसलिए संसार में बुराई बढ़ती है अतएव सदैव सावधान रहना चाहिए कि पापमय विचार मन में न घुसने पावें। जब उनका उदय हो तो उसी क्षण धकेल कर बाहर निकाल देना चाहिए। अपनी और संसार की सर्वोत्तम सेवा इसी में है, कि तुम सदा पवित्र विचार करो। प्रेम, दया, परोपकार, सहानुभूति के विचार अपनी सच्ची उन्नति और दूसरों की सच्ची सेवा करने का निश्चित मार्ग है।

साधारण रीति के किये जाने वाले विचार हलके होते हैं और उनका असर भी हलका होता है, किंतु यह गहरे अंतराल तक

पहुँचकर विश्वास का रूप धारण कर लेते हैं तो इनका बड़ा अद्‍भुत असर दिखाई देता है। कहा गया है कि "विश्वासो फलदायक:।" दृढ़ विश्वास इतना प्रबल होता है कि इसके द्वारा उपस्थित होने वाले फल भी आश्चर्यजनक होते हैं। एक चिकित्सक, चिकित्सा शास्त्र में बड़ा कुशल है, रोग विज्ञान का वह बड़ा भारी पंडित है, औषधियाँ एक से एक बढ़िया रखता है, किंतु बीमार को लाभ नहीं होता जबकि दूसरा वैद्य जो बीमारी के बारे में बहुत ही कम जानता है और मामूली सा चूरन-चटनी दे देता है, तो बीमार को फौरन ही फायदा होता है। उसका कारण विश्वास है। रोगी को उस विद्वान चिकित्सक पर विश्वास न था, किंतु उस अनाड़ी वैद्य पर उसे भरोसा था, इसीलिए वे कीमती दवायें बेकार हो गईं और घास-फूस संजीवन साबित हुआ। डॉक्टर लोग अब इस बात को स्वीकार करते हैं कि विश्वास से बढ़कर और कोई दवा नहीं है। सच्ची बात तो यह है कि इलाज तो एक बहाना है। उसका असर १० प्रतिशत और विश्वास का असर ९० प्रतिशत होता है। लोग अपने विश्वास के आधार पर अच्छे होते हैं, किंतु समझते यह हैं कि हमें दवा ने अच्छा कर दिया।

हम देखते हैं कि नदी, पर्वत, मूर्ति, मठ, मंदिर, देवी, देवताओं को पूजने वालों को ये ही वस्तुएँ उनकी इच्छित कामना पूरी करती हैं और मन चाहा फल देती हैं। वैसे इन जड़ वस्तुओं में अपनी निज की कुछ भी शक्ति नहीं है। कोई कुत्ता उन पर पेशाब कर दे, तो भी अपनी रक्षा नहीं कर सकतीं, फिर भक्तों को इष्ट फल कैसे देती हैं? एक तत्त्वदर्शी ने इस संबंध में गहरा अनुसंधान करके बताया है कि गहरे विश्वास के साथ की हुई आराधना जिस पर समर्पित की जाती है, उससे टकराकर वापस लौट आती है। रबड़ की गेंद को जितने जोर से खींच कर दीवार

पर मारा जायगा, वह उतने ही अधिक वेग के साथ लौटकर वापस तुम्हारे पास आ जायेगी। श्रद्धा और भक्ति की भावना में आत्म शक्ति का बाहुल्य रहता है और इष्ट देव से टकराकर जब वापस लौटती है तो उसमें पूरा बल होता है। देवता में जितना कम विश्वास होगा, उतना ही कम वह फल देगा। असल में मूर्ति आदि जड़ वस्तुओं में अपना निजी बल कुछ भी नहीं है, उनमें पूजा के योग्य बस एक ही गुण है कि जिससे जो कुछ लेते हैं, उसमें बिना रत्ती भर घटाये बढ़ाये उसे ज्यों की त्यों लौटा देते हैं। महाभारत में एक कथा है कि एकलव्य नामक भील ने गुरु द्रोणाचार्य से शस्त्र विद्या सीखनी चाही, जब उन्होंने सिखाने से मना कर दिया तो एकलव्य ने जंगल में जाकर उस द्रोणाचार्य की मूर्ति स्थापित की और उसी को गुरु मानकर धनुर्विद्या सीखने लगा। फलस्वरूप वह इतना कुशल हो गया कि प्रत्यक्ष द्रोणाचार्य के शिष्यों में से उस जैसा एक भी न था। इस प्रसंग में यह न सोचना चाहिए कि द्रोणाचार्य की मूर्ति में कुछ चमत्कार था, विद्या देने वाली वस्तु तो उसकी आत्मिक भावना थी जो उस मूर्ति से टकराकर लौटी थी और संतोषजनक परिणाम उपस्थित किया था।

धर्मशास्त्र और योग शास्त्र दोनों ने एक स्वर होकर गुरु की बड़ी महिमा गाई है कितने ही बड़े-बड़े ग्रंथ गुरु की महिमा में लिखे गए हैं। यहाँ तक कि गोविंद से भी गुरु को बड़ा बताया गया है। इस विवेचन का रहस्य यह है कि उस पर जितनी श्रद्धा होगी वह लौटकर उतनी ही मात्रा में तुम्हारी उन्नति करेगी। गुरु कहलाने वाला भी आखिर मनुष्य ही है और जब तक वह शरीर धारण किये हुए हैं तब तक शरीरधारियों से होने वाली त्रुटियाँ उससे भी होती रहेंगी। फिर साधारण या थोड़े बहुत उन्नत मनुष्य को उतनी बड़ी महिमा प्रदान की गई है, उसका वास्तविक रहस्य यही है जो

ऊपर कहा है। महर्षि दत्तात्रेय ने चौबीस गुरु बनाए थे जिनमें कई तो अज्ञ मनुष्य और पशु-पक्षी तक ये वे दत्तात्रेय की अपेक्षा बहुत ही कम ज्ञान रखते होंगे और यह भी न जानते होंगे कि गुरु किसे कहते हैं ? या हम किसके गुरु हैं ? फिर भी उन अज्ञानी गुरुओं द्वारा दत्तात्रेय ने उतना ही लाभ उठाया जितना एक पहुँचे हुए सिद्ध गुरु से उठाया जा सकता है। इस युग में भक्ति का उपहास उड़ाया जाता है। कहने वालों को हम झूँठा नहीं कहते क्योंकि पंचतत्त्वों के बने हुए इस प्रपंच में भ्रम या त्रुटियों के अतिरिक्त और भला हो ही क्या सकता है ? सत्य तो केवल परमात्मा है। उसके अतिरिक्त और जो कुछ दिखाई पड़ता है भ्रम है, मिथ्या है। कौन कहता है कि पत्थर की प्रतिमा ईश्वर है ? या हाड़ मांस का मनुष्य किसी का गुरु है। जो खुद भी चल फिर न सके वह कैसा ईश्वर है ? जो अपने विकार भी दूर न कर सके वह कैसा गुरु है ? तत्त्वज्ञानी जानते हैं ये वस्तुएँ साध्य नहीं साधन हैं। आत्मा अपने आप अपना विकास या पतन करता है। बाहरी वस्तुएँ तो सहायक मात्र हैं। परंतु स्मरण रखिए कि मनुष्य को इन साधनों की अनिवार्य आवश्यकता है। बिना साधनों के साध्य तक पहुँचना असंभव है।

विश्वास जब अधिक दृढ़ होते हैं तो वे भी मूर्तिमान हो जाते हैं। भूत-प्रेत को हम असत्य नहीं कहते। वे होते हैं और कई बार अपने प्रत्यक्ष अनुभव देते हैं, परंतु अनेक बार हमारे विश्वासों की प्रतिमाएँ ही भूत रूप में दृष्टिगोचर होती हैं, यदि तुम विश्वास कर लो अमुक बरगद पर भूत रहता है और अंधकार के समय वहाँ जाओ तो पेड़ की कोई टहनी भूत बन जायेगी और उसमें हाथ, पाँव, मुँह आदि सारे अंग भूत जैसे उग आवेंगे। हो सकता है कि वह चले-फिरे भी और कुछ बातचीत भी करे। असल में वह बरगद का भूत नहीं था, वरन् विश्वास का भूत था। जैसे कि मूर्ति पूजकों को मूर्तियों अपना

प्रभाव दिखाती हैं। देखा गया है कि अधिकांश भूत उन्हीं लोगों पर असर करते हैं, जो उन पर विश्वास करते हैं। हाँ, उन थोड़ी सी घटनाओं की बात अलग है, जिनमें वास्तविक प्रेतों का समावेश होता है। तांत्रिक अनुष्ठानों के द्वारा मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, स्तंभन अन्य प्रकार के भले बुरे काम होते हैं। इन क्रियाओं में कितनी ही बार ऐसा देखा जाता है कि कुछ चमत्कारिक कार्य ऐसे होते हैं मानो कोई दूसरा अप्रत्यक्ष व्यक्ति हाथ पाँव से इन कामों को कर रहा है। यह कार्य किसी भूत प्रेत के नहीं वरन् तांत्रिक की भावना प्रतिमा के द्वारा होते हैं। छाया पुरुष कई व्यक्तियों को सिद्ध होता है, यह कोई और चीज नहीं है, केवल अपने विद्युत परमाणुओं के द्वारा विश्वास के आधार पर रची गयी एक सजीव मूर्ति है, जो सूक्ष्म तत्त्वों के कारण बनी हुई होने के कारण सूक्ष्मज्ञान रखती है और कितने ही काम शरीरधारी की भाँति या उससे भी अच्छी तरह कर सकती है, यद्यपि उसकी स्थूल देह नहीं होती। कर्ण पिशाचनी, यक्षिणी, भैरवी, दिव्यस्वप्ना आदि की सिद्धियों में भी आत्म तेज के प्रबल चित्र बन जाते हैं, जो उग्र साधन द्वारा गहरे जमाये गये विश्वास की मात्रा के अनुसार कार्य करते हैं। देवताओं का या ईश्वर का दर्शन होना, दिव्य वाणी सुनाई पड़ना या किन्हीं व्यक्तियों में कुछ विशेष चमत्कारिक शक्तियों होना यह सब मानवीय विद्युत के मूर्तिमान और जीते-जागते चमत्कार हैं।

स्त्री-पुरुष आकर्षण

स्त्री और पुरुष के शरीर में अलग-अलग प्रकार की विद्युत धाराओं का विशेष प्रवाह होता है। स्त्री के शरीर में निगेटिव आकर्षण और पुरुष के शरीर में पोजीटिव (विकर्षण) विद्युत अधिक मात्रा में होती है। युवावस्था में नवीन रक्त होने के कारण ये धारायें भी अधिक मात्रा में होती हैं, किंतु दोनों ही एकांगी होती हैं, दोनों के

शरीरों को लाभ प्राप्त होता है। युवा स्त्री और पुरुष के शरीर जब आपस में मिलते हैं तो इन दोनों को लाभ होता है और शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों के विकास में मदद मिलती है। दोनों की अपूर्णता दूर होती है। संसार की जनगणना बताती है कि विश्व भर में विवाहितों की अपेक्षा अविवाहित लोग अधिक बीमार पड़ते हैं और अधिक मरते हैं। आप विधवा व विधुरों में शारीरिक कांति और अच्छा स्वास्थ्य नहीं देख सकते। वे किसी न किसी रोग का रोना रोते रहते हैं। इस सच्चाई को सुनकर चौंकने की जरूरत नहीं है। हम अखंड ब्रह्मचर्य या दीर्घकालीन ब्रह्मचर्य के विरोधी नहीं हैं और न शरीर शास्त्र का सत्य सिद्धांत ही उसके विपक्ष में है। जो लोग योग की विशिष्ट क्रियाओं द्वारा वीर्य की प्रचंड शक्ति को अपने काबू में करके पूरी तरह रोक कर उसे दूसरी तरफ व्यायाम या ज्ञानोर्जन में खर्च कर सकें वे करें। वे दीर्घकाल तक ब्रह्मचारी रह सकते हैं, परंतु उन कुछ अपवादों के कारण शरीर शास्त्र की सच्चाई में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। मध्यम श्रेणी के लोगों के लिए यह आवश्यक है कि वे विवाहित जीवन व्यतीत करें और स्त्री-पुरुष आपस में मिलकर अपने शरीरों के अभावों की पूर्ति करते हुए स्वाभाविक जीवन व्यतीत करें। आयुर्वेद तथा प्राचीन चिकित्सा शास्त्र इस बात में एक मत है कि साधारण विचारों के लोग यदि बहुत समय तक अपनी काम वासना को मारते रहें तो उन्हें प्रमेह, नपुंसकता या इसी प्रकार के अन्य रोग हो जाते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण विधवा और विधुरों की अस्वस्थता के रूप में हम घर-घर में देख सकते हैं। अनुभव बतलाता है कि गृहस्थ धर्म पालन करने पर दोनों ही पक्षों को लाभ होता है। हानि केवल गर्भाधान की क्रिया को भंग करने में है। जो भोजन बनाने की क्रिया में गलती करता है, वह परिणाम में कड़वी रोटी

खाएगा, किंतु इस दोष के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि रोटी का स्वाद कड़वा होता है।

सम वय के स्त्री पुरुषों को विवाहित होना चाहिए, क्योंकि मनुष्य जितनी अधिक आयु का हो जाता है, उतनी ही शोषक शक्ति बढ़ जाती है। छोटा पौधा अपने आस-पास की जमीन से थोड़ी खुराक खींचता है किंतु बड़ा पेड़ बहुत दूर-दूर से, जमीन में बहुत गहराई से खुराक खींच लाता है। इसी प्रकार पति-पत्नी जो अधिक आयु का होगा, वह छोटी उम्र वाले को चूसेगा। आयुर्वेद बतलाता है कि छोटी उम्र की स्त्री के सहवास से बल बढ़ता है, समान से सम रहता है और अधिक आयु वाली से क्षीण होता है। ठीक यही बात स्त्री के संबंध में है, यदि उसका पति छोटी आयु का है तो पुष्ट होगी, बराबर की है तो समान बल रहेगा और अधिक आयु का है तो क्षीण हो जाएगी। पुरुष जाति इस सिद्धांत को बहुत प्राचीन काल से जानती आ रही है और उसे अच्छी तरह व्यवहार में लाती है; किंतु इस व्यापक सत्य को उसने बड़ी बुद्धिमानी के साथ छिपाये रक्खा है, ताकि स्त्रियों में असंतोष पैदा न होने पावे। हम में से कोई अपने लड़के का विवाह उससे बड़ी लड़की के साथ नहीं करता। एकाध वर्ष लड़की बड़ी हो तो समवय ही गिनी जायेगी। इस पर भी समाज में इसे ठीक नहीं माना जाता कि वह वर की बराबर उम्र की हो। परंतु ऐसा तो कहीं भी नहीं देखा जाता कि २५ वर्ष की लड़की की शादी १४ वर्ष के लड़के के साथ हो, क्योंकि इसमें लड़के को हानि अधिक है। यही बात लड़की पर लागू होती है। उसका पति उससे जितना ही उम्र में अधिक होगा, उतनी ही उसे हानि है। अधिक आयु का पति कम उम्र में अधिक होगा, उतनी ही उसे हानि है। बड़ी उम्र के पुरुष जब दूसरी-तीसरी शादी करके छोटी बहू लाते हैं, तो उनके शरीर उसके जीवन तत्त्वों का शोषण करने लगते हैं जैसे

अमरबेल जिस पेड़ पर छा जाती है, उसका रस खींच कर स्वयं बलवान होती रहती है। वृद्धावस्था में विवाह करने वाले पुरुषों की आयु बढ़ जाती है। इनका स्वास्थ्य भी सँभल जाता है, किंतु स्त्री अल्प समय में निस्तेज और बुढ्ढी हो जाती है। जो पिता धन के लोभ से अपनी लड़कियों की शादी वृद्ध पुरुषों के साथ कर देते हैं, वे उसे तिल-तिल करके अपना जीवन दूसरों को चटाने के लिए असहाय छोड़ देते हैं। आपने देखा होगा कि वयस्क पुरुषों की अल्प आयु स्त्रियाँ अक्सर बीमार पड़ी रहती हैं, वे नहीं जानती कि इसका वास्तविक कारण क्या है ? यदि जान भी लें तो बेचारी कर भी क्या सकती हैं ? जिस प्रकार किसी गरीब की कमाई को जबरदस्ती छीन कर खाना पाप कर्म है, उसी प्रकार वृद्ध विवाह भी है। दुःख की बात है कि पुरुष जाति अपने स्वार्थ पर न्याय का बलिदान कर रही है।

सहवास के समय शारीरिक अंग उत्तेजित होते हैं और उनकी उष्णता बढ़ती है, यह बढ़ी हुई उष्णता एक दूसरे के अंगों में प्रविष्ट होती है। शरीर का सबसे प्रबल और सजीव श्लेष्मा वीर्य है। स्खलन के समय दोनों की आंतरिक शक्ति का पात होता है। इस विद्युत धारा को गुप्त अंगों द्वारा ग्रहण करके अपने अंदर धारण कर लेते हैं। इस प्रकार दोनों के गुण, कर्म, स्वभावों का एक-दूसरे में परिवर्तन होने लगता है। एक समान वस्तुएँ आपस में आकर्षित होती हैं। यह विज्ञान का आद्य नियम है। स्त्री के विद्युत कण पुरुष शरीर में और पुरुष के स्त्री शरीर में व्याप्त हो जाते हैं। वे अपने मूल जन्म स्थान की याद करके बार-बार उसी ओर खींचते हैं, जैसे कोई परदेशी बार-बार अपने घर का स्मरण करता है। इसी प्रकार दोनों के विद्युत कण एक दूसरे की ओर खिंचते रहते हैं। इसी विद्युत क्रिया को

दाम्पत्य प्रेम कहते हैं। दोनों में बड़ी ममता बढ़ जाती है। अन्य प्रियजनों से इतना प्रेम नहीं होता, जितना दंपत्ति में होता है। विद्युत कणों के एक से दूसरे के शरीर में जाने से प्रेम बढ़ता है, इसका दूसरा प्रमाण संतान प्रेम है। माता-पिता के शरीर के कुछ भाग से संतानका शरीर बनता है, इसलिए वह भाग अपने मूल स्थान की ओर खिंचते और खींचते रहते हैं। संतान के शरीर में पिता की अपेक्षा माता का भाग अधिक लगा होता है, इसलिए बच्चों में पिता की अपेक्षा माता की ममता अधिक होती है।

स्त्री-पुरुष के साथ-साथ रहने पर एक दूसरे को प्रोत्साहन मिलता है और प्रसन्नता होती है। यह बुरी प्रथा है कि स्त्रियाँ बाहर के पुरुषों से तो बातचीत करें, परंतु घर में पति के आने पर घूँघट निकाल लें या उनसे बात न करें। यह प्रथा मनोविज्ञान की दृष्टि से बहुत ही खराब है और इसे जितनी जल्दी हो सके छोड़ना चाहिए। भारत में स्त्रियाँ पतियों के साथ बाहरी काम काजों में साथ-साथ काम नहीं कर सकतीं, तो भी इतना तो होना ही चाहिए कि जब वे घर आयें तो स्वतंत्रतापूर्वक बोल चाल सकें। सात्विक सहवास यही है कि स्त्री-पुरुषों को आपस में अधिक संभाषण की पूरी सुविधा और स्वतंत्रता प्राप्त हो। कभी-कभी विशेष अवसरों पर आलिंगन आदि भी। गर्भाधान क्रिया मर्यादा से बाहर कदापि न जानी चाहिए, क्योंकि दोनों के शरीर एक दूसरे को खींचकर अनावश्यक काम जागृत करते हैं। आवश्यकता से अधिक इद्रिंय उत्तेजना और पूरी निद्रा का न आना यह दोनों ही बातें स्वास्थ्य के लिए अहितकर हैं। इसलिए यह स्मरण रखना चाहिए कि जब सोने का समय हो तो दोनों अलग-अलग बिस्तरों पर आराम करें।

वेश्यागमन ऐसा है जैसे दावत में सैंकड़ों आदमियों की बची-खुची, थूक-लार लगी हुई गंदी जूठन चाटना। इससे गर्मी, सुजाक

आदि शारीरिक कष्ट होते हैं, सो तो होते ही हैं, मानसिक क्षति कई गुना अधिक होती है। वेश्यायें अपने कर्म को पाप कर्म मानती हैं। जो व्यक्ति जानबूझकर पाप कर्म करता रहता है, उसका शारीरिक वातावरण बड़ा ही दुष्ट और घातक हो जाता है। ऐसे वातावरण के प्रभाव से बचे रहना कठिन है। वेश्या के पास जो आते हैं वे सभी पाप कर्मा होते हैं। वे अपनी-अपनी सौगात वेश्या के मन पर छोड़ते जाते हैं। ऐसे असंख्य दुराचारियों की विचारधारा वेश्या के शरीर में भरी रहती है। उसके निकट आने वाला व्यक्ति उसके रंग की काली छाप लिए बिना बच नहीं सकता। वेश्या का शरीर और मन जिन पाप कृत्यों में दिन-रात डूबा रहता है उनका एक वायुमंडल तैयार हो जाता है। उस वायुमंडल में एक बार फँसकर फिर पीछा छुड़ाना बड़ा ही मुश्किल है। वेश्वालय, मदिरालय, द्यूतग्रह या अन्य ऐसे ही स्थानों में व्याप्त असंख्य लोगों की दुर्वासनायें नये आदमी के पीछे डाकिनी की तरह चिपट जाती है और उसे खिंचकर उसी नारकीय रंग में अधिकाधिक रंगने को बाध्य करती हैं। फलस्वरूप इनके चक्कर में पड़ जाने वाला आदमी उच्च जीवन से पतित होकर पाप और नरक की ज्वाला में जलने लगता है। पर-स्त्री गमन में भय और सामाजिक दंड की आशंका भरी होती है। यह आशंका और भय प्रथम तो समागम को निरानंद बना देते हैं, दूसरे वे भय के विचार मन में जमा कर अन्य शारीरिक और मानसिक उपद्रव उत्पन्न करते हैं, अतएव इससे भी वेश्यागमन की ही भाँति बचना चाहिए।

सत्संग

मनुष्य दूसरों की विद्युत शक्ति को भी खींचकर अपने अंदर धारण कर सकता है। संगति का भला बुरा असर होना प्रसिद्ध है। दुष्टों के संग से मनुष्य वैसा ही बनने लगता है और सत्संगति में रहकर सुधर जाता है। कारण यह है कि जिस प्रकार पुष्प अपनी

गंध के परमाणु हर घड़ी वायु में फेंकता रहता है, उसी प्रकार मनुष्य शरीर भी अपनी शारीरिक विद्युत के परमाणु हर घड़ी इधर-उधर फेंकता रहता है। जिस प्रकार बगीचे का वायुमंडल सुगंध से भर जाता है, उसी प्रकार मनुष्य की शारीरिक विद्युत के परमाणु अपने आस-पास वैसा ही घेरा बना लेते हैं। जैसे कि उसके विचार या शारीरिक स्थिति होती है। डॉक्टर लोग कहते हैं कि बीमार के पास उसकी बीमारी के कीड़े उड़ते रहते हैं, इसलिए स्वस्थ मनुष्यों को उनसे दूर रहना चाहिए नहीं तो वे कीड़े उन पर भी आक्रमण करेंगे। डाक्टर लोग खुद बहुत सावधान रहते हैं, रोगी को छूकर वे फौरन हाथ धो लेते हैं, जो औजार रोगी के शरीर को स्पर्श करता है उसकी भी सफाई करते हैं, वे जानते हैं कि ऐसा न करेंगे तो बीमारी के कीड़े दूसरों पर हमला करेंगे। हम नित्य देखते हैं कि एक मनुष्य की छूत दूसरे व्यक्तियों को भी लगती है और कई बार तो वह भी उसी बीमारी में ग्रसित हो जाते हैं। यहाँ शब्दों के हेर-फेर के कारण लोग समझने में भ्रम करते हैं। कीड़े जर्म्स से यह न समझ लेना चाहिए कि यह घुन, चींटी या दीमक जैसे कीड़े होते हैं। यदि वह इसी प्रकार के होते, तो केवल उन्हीं लोगों पर असर करते जो उन्हें छूता, परंतु यह तो पास जाने पर बिना छुए हुए भी असर करते हैं। तब क्या यह मक्खी, पतंगे या तितली की तरह उड़ने वाले होते हैं? नहीं यह इस तरह के भी नहीं होते। वास्तव में यह किसी तरह के नहीं होते, इनका रंग-रूप दुनियाँ के किसी भी कीड़े से नहीं मिलता। जीव का प्रधान चिन्ह उसके हाथ-पाँव, आँख, मुँह आदि इंद्रियाँ हैं, ऐसी कोई भी इंद्रिय इनमें नहीं देखी जाती, फिर यह जीव या कीड़े किस प्रकार हुए? असल में यह जर्म्स मनुष्य शरीर में से हर घड़ी निकलने वाली बिजली के परमाणुओं की शक्ल में देखे जाते हैं

और उनके दोनों सिरों पर निगेटिव और पोजीटिव धाराओं के अंश अनुभव किये जाते हैं। हमारे मत की पुष्टि उस बात से भी होती है कि यह हर व्यक्ति पर असर नहीं करते जैसे कि बिजली हर चीज पर असर नहीं करती। अस्पतालों में परिचारक छूत के रोगियों की परिचर्या करते हैं, पर वे बीमार नहीं पड़ते। घरों में भी छूत की बीमारी नहीं लगती, जो लोग निर्भय रहते हैं, परवाह नहीं करते, अपना मन मजबूत रखते हैं, उनके ऊपर असर नहीं होता, किंतु जो लोग डरते हैं, घबड़ाते हैं, वही बीमार पड़ते हैं। डरने का अर्थ उन विद्युत परमाणुओं को आकर्षित करना और निर्भय रहने का अर्थ उन्हें फटकार देना है। यह जर्म्स बिना बुलाये किसी स्थान पर नहीं जाते जैसे कि बिजली की प्रचंड शक्ति भी विरोधी वस्तुओं पर असर नहीं करती। यदि यह कीड़े मामूली कीड़े की तरह होते तो किसी के बुलाने न बुलाने की परवाह न करते और जैसे चींटी दीवार पर चढ़ जाती है, वैसे ही यह रोग कीट भी हर एक मनुष्य पर चढ़ दौड़ते, परंतु ऐसा नहीं होता।

यह न समझना चाहिए कि यह जर्म्स बीमार आदमियों के शरीर में से ही निकलते हैं। यह तो मनुष्य के शरीर से हमेशा हर हालत में निकलते रहते हैं, जैसे कि पानी में से भाप। मामूली तौर से हमें पानी में से भाप उठती हुई दिखाई नहीं देती, परंतु बर्तन में रखा हुआ पानी धीरे-धीरे घटने लगता है और कुछ समय में सूख जाता है। इसे सिद्ध होता है कि यद्यपि हमें दिखाई नहीं देता परंतु पानी धीरे-धीरे उड़ता रहता है। रोगी और निरोग सभी मनुष्यों के शरीर में से विद्युत परमाणु उड़ते रहते हैं और जैसे वह होते हैं अपना असर दूसरों पर डालते रहते हैं।

अन्य जीव जंतुओं में निरोधक शक्ति नहीं होती इसलिए उन पर परमाणुओं का विशेष असर होता ही है। ऋषियों के आश्रम के

निकट पहुँचते-पहुँचते सिंह आदि हिंसक पशु भी अपना प्रभाव भूलकर प्रभावित हो जाते हैं, किंतु मनुष्य दूसरे ही प्रकार का प्राणी है, इसमें परमात्मा ने निरोधक शक्ति बहुत प्रबल मात्रा में दी है। उसकी इच्छा बिना कोई असर उस पर नहीं पड़ता। साधारणतः लोगों में यह निरोधक शक्ति बहुत कम मात्रा में पाई जाती है, किंतु यदि कोई व्यक्ति उस विषय से बिलकुल अपरिचित हो या दृढ़ता पूर्वक उसका प्रतिरोध करता हो तो उस पर कुछ प्रभाव न होगा। अक्सर अँधेरे में लोगों को डर लगता है, किंतु जंगली लोग जिन्हें अँधेरे में ही काम करना पड़ता है, इस बात को नहीं जानते कि अँधेरे में कोई डर की बात है, इसी प्रकार एक मनस्वी व्यक्ति विश्वास करता है कि मुझे कोई भय नहीं डरा सकता, अतएव वह भी अँधेरे में निर्भय विचर सकता है। महान पुरुषों के निकट वातावरण में आने पर असंख्य मनुष्यों पर असर पड़ता है। गाँधीजी के विचारों से असंख्य मनुष्यों की जीवन दिशा बदल गई, उनके अंदर मानसिक क्रांति हो गई, किंतु उनका झोंपड़ा बनाने वाले मजदूर या अन्य अज्ञानी मनुष्यों पर उनका कुछ भी असर नहीं हुआ, यद्यपि वे उनके साथ रहते रहे। इसी प्रकार एक दृढ़ विरोधी व्यक्ति पर भी उसका कुछ असर नहीं होता, यद्यपि महापुरुष की तुलना में वह सब प्रकार से नगण्य है। गाँधीजी के एक पुत्र पर उनका रत्ती भर भी असर नहीं था यद्यपि वह उनके निकट संपर्क में रहता था।

उपरोक्त पंक्तियों में हमारा यह बताने का अभिप्राय है कि दूसरों के शारीरिक और मानसिक शक्ति संपन्न विद्युत परमाणुओं को मनुष्य चाहे तो गहरे अज्ञान या प्रबल मनस्विता के द्वारा रोक भी सकता है। शेष दशाओं में उनका असर दूसरों पर अवश्य होता है। उपरोक्त अपवाद कहीं हजारों घटनाओं में एक आध बार देखे जाते

हैं अन्यथा साधारणतः मनुष्यों की मानसिक स्थिति ऐसी ही रहती है कि वे नये प्रभावों को ग्रहण करें। बालकों में न तो गहरा अज्ञान होता है (क्योंकि इस समय उनके पूर्व संस्कार पूर्णतः सुप्त होकर नये साँचे में नहीं ढल गये होते) और न निरोधक शक्ति का विकास होता है। इसलिए वे जैसे लोगों के साथ रक्खे जाएँगे निश्चय वैसे ही बन जाएँगे। इसमें भी कुछ अपवाद पाये जाते हैं, कुछ बालक माता-पिता से विरुद्ध गुण-स्वभाव के होते हैं, इसका कारण उनके प्राचीन संस्कार अत्यंत प्रबल समझने चाहिए। उपरोक्त कुछ अपवादों को छोड़कर शेष निन्यानवे प्रतिशत लोगों पर संगति का असर होता है। किसका असर किस पर कितना होगा? यह एक प्रकार की कुश्ती है। जिसकी धारण, योग्यता और आकर्षण शक्ति जितनी अधिक होगी वह दूसरों को उतना ही अधिक अपनी ओर आकर्षित, प्रभावित कर लेगा। रोज हम लोग बहुत से लोगों से मिलते जुलते हैं, पर कोई खास असर अपने ऊपर नहीं होता। क्योंकि उनके विद्युत परमाणु साधारण स्तर के होते हैं और हमारे मन से टकराकर लौट जाते हैं, किंतु विशेष शक्ति रखने वालों का असर हमारे ऊपर अवश्य हो जाता है। विशेष रूप से भले या बुरे लोग ही किसी को प्रभावित कर सकते हैं। हमारे मन में जिस प्रकार के बीज होते हैं, उसी प्रकार के लोगों की ओर आकर्षित होते हैं और उनके सहवास से उन बीजों को वृक्ष रूप में बढ़ा लेते हैं, तब कहा जाता है कि अमुक मनुष्य का अमुक प्रकार असर इस पर हुआ है। जब तक सांसारिक अनुभव परिपक्व दशा में नहीं होता तब तक दोनों तरफ झुकने का अंदेशा रहता है। नवयुवकों में हर हवा का विरोध करने की क्षमता नहीं होती और वे जैसा देखें उस तरफ बह सकते हैं। कई अधिक उम्र के व्यक्ति भी ऐसा ही मुलायम मन लिए हुए होते हैं और दूसरों से बहुत जल्द प्रभावित होते हैं, किंतु जीवन की एक दशा निर्धारित हो जाने,

कुछ सिद्धांत निश्चित कर लेने पर अपने विषय का ही प्रभाव पड़ता है, अन्य प्रकार के असर व्यर्थ हो जाते हैं।

आपको अपना जीवन जिस ढाँचे में डालना हो उस प्रकार के प्रतिभाशाली लोगों का सत्संग कीजिए और उनके निकट श्रद्धा के साथ, आदरपूर्वक, विनम्र होकर जाइए। नम्र होने का तात्पर्य अपने अंदर अधिक ग्राहक शक्ति उत्पन्न करना है। "तद्विद्धि प्रणपातेन परिप्रश्नेन सेवया" अर्थात् प्रणाम करके, सेवा करके और प्रश्न करके ज्ञान को प्राप्त करो। अहंकार युक्त उद्धत स्वभाव के साथ सत्संग करने का अर्थ अपने अंदर निरोधक शक्ति को भर लेना है, इससे उसको कुछ भी लाभ न मिलेगा। जिससे कुछ प्राप्त करना हो उस पर श्रद्धा करते हुए नम्रता पूर्वक उसके निकट जाओ, ऐसा करने से तुम्हारी आकर्षण शक्ति बढ़ जाएगी और उन महानुभाव के आस-पास उड़ते हुए परमाणुओं को अपने अंदर खींच सकोगे। पवित्र लोगों के निवास स्थानों पर बैठने से ही अपने अंदर बड़ी शांति प्राप्त होती है, और बुद्धि का विकास होता हुआ दृष्टिकोण होता है।

दो व्यक्ति जब एक दूसरे को कुछ लेन-देने की दृष्टि से एकाग्र होकर सत्संग करते हैं तो उसका फल बहुत ही चमत्कारिक होता है। दोनों की एकाग्रता हो जाने से दोनों आपस में संबंद्ध हो जाते हैं। एक व्यक्ति अपना ज्ञान दूसरे पर फेंकता है और दूसरा उसे पूरी तरह पकड़ता है, वह ज्ञान ग्राहक के अंतःकरण में बहुत गहरा उतर जाता है, मामूली काम काज का ज्ञान, लोक व्यवहार की शिक्षा, मन और बुद्धि तक ही सीमित है, इसलिए यह इतने प्रभावशाली और आनंदमयी नहीं होते, कारण? देने वाले के भौतिक ज्ञान और लेने वाले की भौतिक बुद्धियों में ही यह आदान-प्रदान होकर ऊपर उथला ही रह जाता है, फिर भी मनोयोग पूर्वक सिखाया या सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है, किंतु आध्यात्मिक शिक्षा के साथ केवल वाचक ज्ञान

नहीं होता अपितु ज्ञान की अपेक्षा हजारों गुना अधिक प्रतिभा संपन्न होता है और उसमें ऐसी प्रजनन शक्ति होती है कि उसके परमाणु को भी कोई व्यक्ति अपनी अंतरात्मा में ग्रहण कर ले तो वह बीज अपने आप अपना वंश विस्तार करता है और गुरु के अंदर जितना ज्ञान था वह अनायास ही अपने अंदर उग पड़ता है। दीक्षा का आध्यात्मिक दृष्टि से बड़ा महत्त्व है, इसमें समर्थ गुरु अत्यंत मनोयोग पूर्वक शिष्य को गहरी आध्यात्मिक भूमिका तक नीचे उतार कर अपने कुछ बीजाणुओं को इंजेक्शन की भाँति वहाँ पनपने के लिए छोड़ देता है। यह बीज अमर होकर उसके अंतराल में पड़े रहते हैं और यदि सिंचन हुआ तो बहुत जल्द फलित हो उठते हैं। अन्यथा किसी भी दशा में मरते नहीं और जब भी अवसर पाते हैं हरे हो जाते हैं। आज दंभी और अयोग्य व्यक्ति गुरु दीक्षा जैसे अत्यंत दुरूह संस्कार को करने का साहस कर डालते हैं। वे धन के लालच से उच्चकोटि की यौगिक क्रिया को भी तमाशा बनाते हैं और इसका उपहास कराते हैं। यह कितने दुःख और लज्जा की बात है। उच्च आत्माओं द्वारा दी हुई शिक्षा निष्फल नहीं जा सकती, उसकी प्रक्रिया बहुत जल्द ही दिखाई देने लगती है। कई योगी शिष्य के सिर पर हाथ रख कर उसकी कुंडलिनी जाग्रत करने की क्षमता रखते हैं। हमारे अपने अनुभव में ऐसे कई महात्मा आए हैं, वे जब अपना आत्मिक तेज उग्र करते हैं तो उनके शरीर में बिलकुल बिजली जैसी धारा चल उठती है। उनके शरीर को उस समय छूने पर बिलकुल बिजली से भरे हुए तारों को छूने के धक्के का अनुभव होता है।

यहाँ हम बहुत आगे की बातें कह गए। पाठकों को इतना आगे जाने की जरूरत नहीं उन्हें तो इतना ही जानना चाहिए कि सत्संग का लाभ विनम्र बनकर उठाया जा सकता है। उत्तम विचार वाले प्रबल मनस्वियों के निकट जाने का अवसर ढूढ़ते रहना चाहिए और जब-

जब ऐसे प्रसंग आवें लाभ उठाना चाहिए। यदि तुम्हारा काम-काज करने का या रहने-सहने का प्रबंध उत्तम विचारवान लोगों के साथ हो सके तो अन्य प्रकार का कष्ट उठाकर भी वैसा करना चाहिए, क्योंकि उसके द्वारा जो लाभ होता है, वह अकथनीय है। सत्संग की महिमा का वर्णन करना हमारी शक्ति के बाहर की बात है। पारस के सत्संग से लोहा सोना बन जाता है, किंतु आत्मा के सत्संग से जीव परमात्मा बन जाता है।

शरीर के निकट बैठकर सत्संग करना सबसे उत्तम है। परंतु जहाँ ऐसी सुविधा न हो वहाँ अन्य प्रकार से भी यह हो सकता है। अपने जिन विचारों को तुम पुष्ट करना चाहते हो उसके लिए मानवीय व्यक्तियों से पत्र व्यवहार करो, उनके हाथ के लिखे हुए पत्र औषधि की तरह बड़ी प्रेरणा भरे होते हैं। पत्र का कागज उनके हाथ में आता है और उनके विचारों से लद जाता है। पानी में बिजली को पकड़ने की बड़ी ताकत है। स्याही के साथ वे विचार कागज से चिपक जाते हैं। यह आधे मिलन का काम देता है। प्राचीन महापुरुषों की हस्तलिपियों को बहुत अधिक मूल्य में लोग खरीदते हैं क्योंकि उन कागजों में उन महानुभावों के जीवित विचार चिपके हुए हैं। तुम्हें जब अपने किसी मित्र का पत्र मिलता है तो निश्चय ही उससे अधिक मिलन का अनुभव करते होंगे। सत्संग का यह दूसरा उपाय बहुत ही महत्वपूर्ण है।

छपी हुई पुस्तकें भी अपने लेखक की भावनाओं को धारण किये रहतीं है। यद्यपि छापेखाने की स्याही के साथ उन व्यक्तियों को पढ़ते ही ठीक उसी प्रकार के विचार अपने मन में उत्पन्न होते हैं, जैसे कि उस पुस्तक को लिखते समय लेखक के मन में उत्पन्न उत्पन्न हुए थे। "परकाया प्रवेश" में बताया जा चुका है कि विचारों

का कभी नाश नहीं होता। जो विचार मस्तिष्क से निकलते हैं, वे अनंतकाल तक ईश्वर तत्त्व में मँडराते रहते हैं और कोई जब उनके समान विचार करता है, दौड़कर वहीं पहुँच जाते हैं। यदि किसी प्रबल मनस्वी व्यक्ति के विचार हैं तो वे सशक्त होंगे और अधिक असर करेंगे। पुस्तक के अक्षर पढ़ते ही जो विचार हमारे मन में उत्पन्न होते हैं, वे ही लेखक के विचार वायुमंडल में घूम रहे हैं, इस अवसर पर वे अविलम्ब दौड़ पड़ते हैं और पढ़ने वाले के साथ सम्मिलित हो जाते हैं और लेखक सत्संग का आनंद अनुभव करने लगता है। विचारों के परमाणुओं की गति इतनी तीव्र है कि एक सैकण्ड में तीन बार पृथ्वी की परिक्रमा कर सकते हैं। इसलिए चाहे वह कितनी ही दूर रहा हो, उसके विचारों को तुम्हारे पास तक पहुँचने में तनिक भी विलंब न होगा। लेखक ने जितने मनोयोग के साथ उन विचारों को लिखा होगा, उतना ही उसका अधिक असर होगा। हलके तौर पर या इधर-उधर की यों ही जो पुस्तकें लिखी जाती हैं उनका पाठकों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। यहाँ तक कि वे अच्छी तरह उसे समझ भी नहीं पाते। चाहे भाषा कैसी ही साधारण क्यों न हो। उत्तम विचारों की और अधिकारी लेखकों द्वारा लिखी हुई पुस्तकों पढ़नी चाहिए और यदि उससे विशेष लाभ उठाना है तो लेखक का चित्र ध्यान में रखते हुए यह समझते जाना चाहिए कि लेखक मेरे सामने बैठकर ही इन बातों को समझा रहा है। इस दृष्टि से पुस्तकों में लेखक का चित्र होना आवश्यक है। उत्तम पुस्तकों के सत्संग से भी हम पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं।

विचारों का गंभीर मनन और खोज संबंधी बारीक काम तो एकांत और शांत वातावरण में होता है, परंतु दबी हुई आत्म-शक्ति को उभारने के लिए सामूहिक सत्संग से बड़ा बल मिलता है। जब बहुत से लोगों के मन एक बात पर एकत्रित होते हैं तो उनकी

सम्मिलित शक्ति बड़ी जोरदार हो जाती है, और जब वह उपस्थित लोगों के पास जाती है तो उनमें उत्साह और स्फूर्ति भर देती है। सभा, जुलूस, कमेटी, दरबार पंचायत में शामिल होने पर तत्संबंधी विचारों का अधिक प्रभाव होता है। सामूहिक प्रार्थना, सत्संग या संकीर्तन द्वारा भी उन विचारों को बड़ा प्रोत्साहन मिलता है। यदि कई आदमी साथ-साथ अभ्यास करें, संघ बनाकर सत्संग किया करें, तो उन्हें एकांत की अपेक्षा अधिक स्फूर्ति मिलेगी। परंतु स्मरण रहे कि इसका फल शक्ति का उदय होने तक ही है किसी वस्तु का अन्वेषण या तत्त्व प्राप्ति तो एकांत में ही हो सकती है।

बिना किसी वस्तु की सहायता के एक निश्चित समय पर यदि दो व्यक्ति एकाग्र होकर बैठें और अपने विचार एक दूसरे को भेजने का प्रयत्न करें, तो थोड़े दिनों के अभ्यास से ही उन्हें आशातीत सफलता मिल सकती है। प्रारंभिक दशा में भी उन्हें जो संदेश प्राप्त होंगे, उनमें बहुत से तत्त्व प्राप्त होंगे। आत्मा निर्मल होगी और एकाग्रता बढ़ जायेगी, तो उसी अनुपात से वे संदेश अधिक स्पष्ट और ठीक सुनाई देने लगेंगे। आध्यात्मिक बिजली द्वारा वह बेतार का तार बड़ी सफलतापूर्वक चल सकता है, प्राचीन काल के ऐसे असंख्य उदाहरणों से इतिहास भरा हुआ है, आज भी जो इसकी परीक्षा करना चाहें उन्हें संतोष हो सकता है। यहाँ तक कि दिव्य-दृष्टि भी प्राप्त हो सकती है। वैज्ञानिक लोग ईथर तत्त्व की सहायता से टेलीविजन यंत्रों द्वारा एक स्थान के चित्र दूसरे स्थानों को भेजते हैं। आत्मिक पवित्रता, एकाग्रता और अभ्यास द्वारा दूर देश की घटनाएँ अपने दिव्य चक्षुओं से देखी जा सकती हैं तुम भी प्रयत्न करो तो सफलता प्राप्त कर सकते हो। थोड़ा सा दिव्य दर्शन तो प्रथम प्रयत्न में भी हो सकता है। एकांत स्थान में एकाग्रता पूर्वक अपनी दृष्टि को किसी स्थान पर भेजोगे, तो वहाँ के दृश्यों का तुम्हें अनुभव होगा। आरंभ में

ये चित्र धुँधले और अशुद्ध भी होंगे, परंतु आत्मिक उन्नति के साथ इनकी और सत्यता बढ़ती जायगी। यह सब मानवीय विद्युत के चमत्कार हैं। हम सद्‌गुणों को अपने अंदर धारण करके इस शक्ति का पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं।

रोगों का निवारण

रोगों को दूर करने के लिए अनेक प्रकार के इलाज चालू हैं, इलाज करने वाले बीमारियों को अच्छा करने के लिए बहुत तरह की दवाएँ बनाते हैं, कई दवाएँ तो सोने, चाँदी या रत्न, जवाहरात से भी मँहगी होती हैं। उन बहुमूल्य दवाइयों के गुणगान करने में बड़े-बड़े प्रमाण दिये जाते हैं, परंतु इन औषधियों को अपनी मन मर्जी से चाहे कोई चाहे जितनी मात्रा में नहीं खा सकता, यदि उनके सेवन करने या कराने में जरा सी असावधानी हो जाय तो लेने के देने पड़ सकते हैं। दूसरे उन्हें गरीब आदमी पैसे के अभाव के कारण खरीद नहीं सकते। तीसरे बनाने में त्रुटि हुई या रोग का निदान न हो सका, तो उसका कुछ अच्छा असर नहीं होता। इन कीमती दवाओं की अपेक्षा इस अध्याय में हम एक ऐसी दवा बताएँगे जो गुण में हर एक कीमती दवा से बढ़कर है और कीमत में सबसे सस्ती है, सेवन करने में कुछ भी कठिनाई नहीं, हर आदमी के पास हर समय रह सकती है और शर्तिया फायदा पहुँचाती है। इस दवा का प्रयोग किसी भी दशा में व्यर्थ नहीं जा सकता। सच तो यह है कि जब तक दवा का थोड़ा-बहुत मिश्रण न हो तब तक अन्य दवा दारू कुछ भी लाभ नहीं पहुँचा सकते। क्या तुम उस दवा को जानते हो? यदि नहीं जानते तो हम बताये देते हैं। यह दवा है "मानवीय विद्युत"। रोगी के कीटाणुओं के प्रसंग में हमने बताया था कि छूत के रोगों में मनुष्य की विषैली बिजली दूसरों पर असर कर जाती है। तुम्हें जानना चाहिए कि

जब खराब बिजली में असर करने वाली ताकत है, खराब बिजली खराब असर करती है तो अच्छी जरूर अच्छा असर करेगी। अपनी "प्राण चिकित्सा विज्ञान" नामक पुस्तक में हम सविस्तार आत्म विद्युत द्वारा विभिन्न रोगों को दूर करने की विभिन्न क्रियाएँ बता चुके हैं। उन बातों को पूरे ब्यौरे के साथ यहाँ दुहराना अभीष्ट नहीं है। यहाँ तो उनकी थोड़ी सी जानकारी भर दुहरा देना पर्याप्त होगा। हथेलियाँ या उँगलियों के पोरवों (अंतिम छोरों) में रोग निवारक शक्ति अधिक मात्रा में पाई जाती है। पीड़ित स्थान पर इनका प्रयोग करना चाहिए। जब तुम्हारे पेट में कोई शिकायत हो, दर्द हो रहा हो या कुछ और गड़बड़ हो तो अपनी हथेलियों को गोलाकार में उस स्थान पर घुमाओ कुछ देर यह क्रिया दायी ओर से बाँयी ओर करो और गोलाकार में घुमाने लगो। बीच-बीच में थोड़ी ही देर में देखोगे कि पेट में उमड़ने वाली वायु घट गयी है और दर्द अच्छा हो रहा है। हथेलियाँ जब किसी अंग की त्वचा को रगड़ती हैं तो गर्मी पैदा होती है। यह शारीरिक तेज जिस स्थान पर अधिक तेज होगा वहाँ रक्त की चाल बढ़ जाएगी, तदनुसार बीमारी को हटना पड़ेगा। यदि सिर में दर्द हो रहा हो तो वहाँ भी एक हाथ या दोनों हाथों से स्पर्श करना चाहिए। जहाँ फुंसी, कसक, दरद, अकड़न, तनाव, खुजली या भारीपन मालूम पड़े, वहाँ उँगलियों के अग्रभाग से या हथेली से धीरे-धीरे सहलाना चाहिए। ऐसा करने से उस स्थान के स्वस्थ जीवाणुओं को बल मिलता है और वे अपने आस-पास भरे हुए विजातीय द्रव को बाहर निकाल देने के लिए तैयार हो जाते हैं।

हमारे देश में आत्म-विद्युत् द्वारा रोगों की चिकित्सा करने का घर-घर प्रचार है। जब कोई आदमी थक जाता है तो उसके पैर दबाये जाते हैं, ताकि उसके निर्बल तंतुओं में दबाने वाला अपनी बिजली

भर दे। देखते हैं कि पैर दबाने के बाद थका हुआ आदमी प्रफुल्लित हो जाता है। मालिश का भी ऐसा ही असर होता है। पहलवान लोग मालिश कराने का आदेश करते हैं। थककर चकनाचूर हुए घोड़े मालिश के बाद अपना सारा श्रम उतार देते हैं। सिर की मालिश करने में कुछ नाई आदि ऐसे चतुर होते हैं कि भारीपन और खुश्की को मालिश की विशेष क्रियाओं द्वारा बिलकुल दूर कर देते हैं। गठिया, चोट, अशक्तता या दुर्बलता में तेजी के साथ मालिश कराई जाती है। सिर जब भारी हो जाता है या बुद्धि ठीक प्रकार काम नहीं करती तो लोग माथे पर हाथ रखकर बैठ जाते हैं, ऐसा करने से मस्तिष्क फिर से तरोताजा हो जाता है और जो एक प्रश्न हल नहीं हो रहा था उसका निवारण हो जाता है। पलकों पर कभी-कभी एक फुंसी उठती है जिसे मथुरा के आस-पास "गुहेरी" कहा जाता है। पलकों के ऊपर फोड़े ठीक करने वाली किसी तेज दवा का लगाना खतरे से भरा हुआ होता है। इसलिए हथेली पर उँगली घिसकर उस उँगली को पलक पर लगाते हैं और देखते हैं कि वह फुड़िया जल्दी अच्छी हो जाती है। आँख में अकस्मात कुछ आघात लग जाने पर तत्काल यह उपचार किया जाता है कि किसी कपड़े को मुँह की भाप से गरम करके आँख पर लगाया जाय, आँख में कैसा भी दर्द हो रहा हो इस क्रिया से तुरंत ही लाभ होता है। उँगली या अन्य स्थान पर चोट लग जाने से स्वभावतः हम उसे फूँकते हैं। बच्चे अपने आप अपनी उँगली को फूँककर अच्छा कर लेने का ज्ञान रखते हैं। कई अवसरों पर फूँक द्वारा किसी अंग पर शारीरिक विद्युत का प्रभाव डालने से संतोषजनक फल निकलता है।

बढ़ी हुई गर्मी को घटाने के लिए मार्जन (PASS) बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। पंखा झलना प्राचीन मार्जन क्रिया की नकल है। जब बुखार चढ़ रहा हो, लू सता रही हो, फोड़े में

दाह हो रहा हो, मादक द्रव्यों के कारण गर्मी चढ़ गई हो, या अन्य किसी प्रकार से उष्णता बढ़ जाय तो दोनों हाथों की उंगलियों को इस तरह रोगी की ओर पसारना चाहिए जिससे नाखूनों के अंतिम सिरे बीमारी से पीड़ित अंग की ओर रहें। अब हाथों को नीचे की ओर इस तरह खींचों, मानो उस स्थान की बढ़ी हुई गर्मी को उँगलियों से चिपकाकर पीछे की ओर खींच रहे हैं। यथा अवसर कुछ दूर हाथों को खिसकाने के बाद उन्हें पीछे की ओर खींच लो और एक तरफ इस प्रकार झटकार दो, मानो तुम्हारे हाथ पानी से भीग गये थे और उनकी बूँदों को अलग झटकार दिया हो। इस क्रिया को कुछ देर बार-बार करते रहो, तुम देखोगे कि इससे कैसी जल्दी गर्मी घट जाती है और बीमार को शांति मिलती है। इस प्रकार की क्रियाओं में इच्छा शक्ति का जितना अधिक समन्वय होता है, उतनी ही शीघ्र और अधिक सफलता मिलती है। पीड़ित स्थान पर शारीरिक विद्युत को पहुँचाकर पाठक अपनी और दूसरों की बीमारी में पर्याप्त सहायता कर सकते हैं। बार-बार नया प्रयत्न उन्हें अधिकाधिक संतोष के निकट पहुँचाता जायगा।

बच्चों की सावधानी

बच्चों को नजर लगना मानवीय विद्युत् का अहितकर प्रभाव है। कोई व्यक्ति जब एकाग्र होकर किसी की ओर देखता है तो उसकी दृष्टि प्रभावशाली हो जाती है। लालायित होकर देखने पर भी ऐसा ही प्रभाव होता है। कोई बच्चा अधिक हँसता-खेलता है, प्यारी-प्यारी बातें करता है, तो लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है। यदि इस समय ध्यानपूर्वक उसे खिलाएँ या प्रशंसा करें तो बच्चों को नजर लग जाती है। मुग्ध होकर अधिक ध्यानपूर्वक उनकी ओर दृष्टिपात किया जाय तो भी नजर का असर हो जाता है। किसी-

किसी व्यक्ति में स्वभावतः एक बेधक दृष्टि होती है। यदि वे साधारणतः भी किसी बच्चे की ओर विशेष ध्यानपूर्वक देखें, तो असर हो जाता है। ऐसे लोग जिनके बाल-बच्चे नहीं होते और बच्चों के लिए तरसते रहते हैं, वे जब दूसरों के बच्चे को हसरत भरी निगाह से देखते हैं तो यह असर अधिक होता है, क्योंकि लालायित होकर देखने से दूसरी चीजों का अपनी ओर आकर्षण होता है। पति जब परदेशों को जाते हैं और स्त्री उसकी ओर लालायित होकर देखती है तो रास्ते भर पति का चित्त बेचैन बना रहता है। कभी-कभी तो उन्हें वापस तक लौटना पड़ता है या कुछ ठहर जाना पड़ता है। इसलिए प्राचीन काल में क्षत्राणियाँ पतियों को युद्ध में भेजते हुए प्रोत्साहन देकर, तिलक लगाकर भेजती थीं, कि यदि हम आकर्षण विद्युत् इनकी ओर फेंकेगी तो वे पीछे की ओर खिंचे रहेंगे, युद्ध से लौट आवेंगे या असफल रहेंगे। इसी प्रकार जब वयस्क पुरुष लालायित होकर बच्चों की ओर देखते हैं तो उन बच्चों की शक्ति खिंचती है और वे उसके झटके को बरदास्त न करके बीमार हो जाते हैं। बिना किसी पूर्व रूप के जब अचानक बच्चा बीमार पड़ जाता है तो समझा जाता है कि उसे नजर लग गई।

हमारे यहाँ की स्त्रियों को इसकी जानकारी बहुत पहले से है। नजर से बचाने और लग जाने पर बचाव की क्रिया से भी वे परिचित हैं। ताँबे का ताबीज, शेर का नाखून, मूझ, नीलकंठ का पर आदि चीजें गले में पहनाई जाती हैं। वह चीजें बाहरी बिजली को अपने में ग्रहण करके या उसके प्रभाव को रोककर बच्चों पर असर नहीं होने देतीं। गरम लोहे का टुकड़ा पानी या दूध में बुझाने से वह जल या दूध उस असर को दूर करने वाला हो जाता है। कहते हैं कि आकाश की बिजली अक्सर काले साँप, काले जानवर, काले आदमी या अन्य काली वस्तुओं पर पड़ती

है। काले कपड़े जाड़े के दिनों में इसलिए पहने जाते हैं कि गरमी की बिजली को अपने अंदर इकट्‌ठा करके रख लें और अधिक गर्म रहें। इसी नियम के आधार पर काला टीका लगाया जाता है। काली भस्म चटाई जाती है। जिस प्रकार बड़े-बड़े मकानों में गुंबजों की चोटी पर एक काली छड़ इसलिए लगायी जाती है कि वह स्वयं बिजली का असर ग्रहण करके पृथ्वी में भेज दे ओर मकान को नुकसान न पहुँचने दें; उसी प्रकार यह काला टीका, डोरा आदि नजर के असर को अपने में ग्रहण कर लेता है और बच्चों को नुकसान नहीं पहुँचने देता।

हम नहीं चाहते कि हँसते-खेलते बच्चों को नजर लगने के भय से घरों में छिपा कर रखा जाय और उसे लोगों के सामने अपनी अमृतमयी वाणी बोलने से रोका जाय। बच्चे जीते जागते अमूल्य खिलौने हैं, फिर इस स्वर्गीय सम्मेलन में खाई उपस्थित करना किसी प्रकार उचित न होगा। परंतु अपने मनोरंजन के लिए बच्चे की हत्या कर डालना भी न्याय संगत न ठहराया जायगा। उसमें चौंकने, बड़बड़ाने या हमें धर्म प्रचारक कहने की आवश्यकता नहीं है। कडुवी सच्चाई की ओर से आँख बंद कर लेना ठीक न होगा। खतरा इसको प्रकट करने में नहीं वरन छिपाये रहने में है। यदि वास्तविक बात सर्वसाधारण पर प्रकट हो जाय और उससे होने वाली हानि को लोग समझ जावे तो खतरा बहुत ही कम हो जाय।

साधारण रीति से बच्चों के साथ हँसते-खेलते रहिए, कुछ हर्ज न होगा। नजर उन्हें तब लगेगी जब आप हसरत भरी नजर से देखेंगे। इस प्रकार की दृष्टि के अंतर्गत ऐसी भावनाएँ होती हैं—"काश यह बच्चा हमें मिला होता। मैं इसे पाकर कितना खुश होऊँगा! इसकी सुंदरता कितनी मनोमुग्धकारी है। भगवान ऐसा बच्चा किसी प्रकार मुझे मिले।" यह बातें आदमी जबान से नहीं कहता और

जानबूझकर यह सोचता भी नहीं, पर उसके मन के भीतर ही भीतर ऐसी गुप्त इच्छा उठती है। कभी-कभी तो यह इच्छा इतनी सूक्ष्म होती है कि सोचने वाला यह समझ भी नहीं सकता कि मैने ऐसी भावना की थी । देखा जाता है कि अजगर अपनी दृष्टि से आकाश से पक्षियों को अपनी ओर खींच लेता है। भेड़िए की दृष्टि से भेड़ और बिल्ली की दृष्टि से कबूतर इतने अशक्त हो जाते हैं कि भाग तक नहीं सकते। उनमें यह आकर्षण शक्ति अधिक होती है जिनके मन में वर्षों प्राप्त करने की लालसा लगी होती है। चिरकालीन लालसा धीरे-धीरे अपना पोषण करती रहती है और कुछ दिनों बाद बहुत बलवान हो जाती है। ऐसे लोगों की नजर का झटका लात मारने से भी अधिक गहरा लगता है। साधु-संन्यासी या जिन्हें बच्चों की कोई चाह नहीं होती, उनकी नजर नहीं लगती। बहुत से लोग अपने कई-कई बच्चे होने पर भी संतुष्ट नहीं होते और दूसरे के सुंदर बच्चों को देखकर मन ललचाते हैं, उनकी नजर लग सकती है।

बच्चों को खिलाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनके साथ सात्विक रीति से हँसा-खेला जाय। विशेष ममता न जोड़ी जाय। खिलाते समय तो खासतौर से यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें ममता के आकर्षक विचार न रखे जायँ। ईश्वर का निर्विकार पुत्र, प्रकृति का सुंदर पुष्प, कर्त्तव्य का स्मरण दिलाने वाला सुंदर एवं जीवित खिलौना ही उन्हें समझना चाहिए। बच्चों को बार-बार छाती से लगाना, चूमना, पुचकारना, मेरा प्राण, जीवनाधार आदि अत्यंत ममतापूर्ण शब्द कहना, यह हरकतें अत्यंत खतरनाक है। इनसे बच्चे का जीवन रस सूखता है और यह अल्पायु हो सकता है।

बच्चों को साफ-सुथरा तो रखा जाय, पर ऐसे तड़क-भड़क के कपड़े और जेबर न पहनाए जाएँ, जिससे रास्ता चलते लोगों का

ध्यान उनकी ओर खिंचे। सुरक्षा के अन्य नियम भी माताएँ जानती हैं। आकाश की बिजली जब जोरों से कड़कती है तो शरीर की बिजली का भी ह्रास होता है। उस समय माताएँ बच्चों को घरों में ले जाती हैं। मेलों में जहाँ भारी भीड़ रहती है मुंडन संस्कार से पूर्व नहीं ले जातीं। एक-दो महीने की आयु का होने तक बालकों को सब लोगों के सामने नहीं लाया जाता। हाथ-पाँव में चाँदी आदि धातु के कड़े पहनाये जाते हैं, यह सब वाह्य विद्युत् से रक्षा करने के उपाय हैं। गर्भकाल के नौ मास पूरे होने से पूर्व ही जिन बच्चो का जन्म हो जाता है उनकी और भी अधिक सुरक्षा करनी पड़ती है, क्योंकि गर्भ के सातवें-आठवें मास में बच्चे के अंग तो पूरे बन जाते हैं, पर उनमें विद्युत् का उचित मात्रा में समावेश नहीं हो पाता। सातवें मास में इतनी कम बिजली होती है कि उस पर कोई अधिक आघात नहीं पहुँचता। इसीलिए सातवें मास में पैदा हुए बच्चे अक्सर जीते हैं। ऐसे बच्चे माता की बिजली से अपना काम चलाते हैं। किंतु आठ मास के बच्चे में बहुत कुछ अपनी बिजली होती है, इसलिए बाहरी विद्युत् के धक्के उसे झँकोर डालते हैं और वह बेचारा अक्सर इस दुनियाँ से कूच कर जाता है। माताएँ इन अधूरे बच्चों को बाहर के लोगों की दृष्टि से बचाती हैं। यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि माता-पिता की नजर नहीं लगती क्योंकि उन्हीं की शक्ति से तो उत्पन्न हुआ है, वह एक प्रकार से उन्हीं का तो शरीर है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चा जब तक एक वर्ष का न हो जाय तब तक उसे अयोग्य व्यक्तियों के हाथ में नहीं देना चाहिए और न उसे किसी को चूमने देना चाहिए।

बुरे संस्कार, स्वभाव या स्वास्थ्य वाली धायों द्वारा जब बालकों को दूध पिलाया जाता है तो निश्चय ही बालक उसके दोषों को भी

दूध के साथ पीता है और अपने गुप्त मन में उन्हें धारण करता जाता है। ऐसे बालकों में वे दूषित संस्कार यदि अन्य प्रकार से न हटाये जायँ तो वे बड़े होकर अपने मूल बीजों की भूमिका में विकास करते हैं और बुद्धि, स्वभाव तथा विचारों को अपनाकर क्रूर कर्मा बन जाते हैं। माताओं को जानना चाहिए कि यदि वे स्वंय दूध पिलाने में असमर्थ हों तो गौ या बकरी का दूध जरा सा गरम करके ठंडा होने के उपरांत पिलाएँ।

बालकों की देखभाल रखनी चाहिए और कभी-कभी गोद में भी लेना चाहिए। रात को पास सुलाना चाहिए। परंतु यह बहुत बुरी बात है कि उसे दिन भर गोदी में लादे रहा जाय। इसका परिणाम ठीक वैसा ही होता है जैसा दिन भर हर घड़ी भोजन कराने का। बच्चों की सहायता के लिए गोदी में लेकर उन्हें अपने शरीर की थोड़ी विद्युत देनी चाहिए, परंतु यदि दिन भर गोद में रखा जायगा तो अजीर्ण हो जायगा और वे वैसे ही कुम्हला जाएँगे जैसे अधिक गर्मी से पौधे मुरझा जाते हैं।

माता के पास जब कई बच्चे हो जाते हैं तो वे बच्चों को दादी, नानी, बुआ आदि किसी बड्ढे के पास सोने के लिए भेज देती हैं। अधिक आयु के मनुष्य अपने से छोटी आयु वाले की विद्युत शक्ति का किस प्रकार शोषण करते हैं, यह पिछले पृष्ठों पर हम बता चुके हैं। उसी नियम के अनुसार बालकों का शोषण शुरू हो जाता है। बच्चे दिन पर दिन कमजोर होने लगते हैं। घर वाले इसका वास्तविक कारण नहीं समझ पाते और अन्यान्य उपचारों में भटकते रहते हैं। विपरीत योनि वालों के पास विपरीत विद्युत होती है, यह भी हम पहले कह चुके हैं। वह भी अपना असर बालकों पर करती है। स्त्रियों के पास लड़कों और पुरुषों के पास लड़कियों को नहीं सुलाना चाहिए अन्यथा यह शोषण और भी अधिक होने लगेगा। बच्चे

अपनी छोटी सी शक्ति से माता के अलावा अन्य किसी शरीर से विद्युतांश नहीं खींच सकते, वरन् दूसरे लोग उन्हें ही झँझोड़ सकते हैं। नर से मादा में बिलकुल उलटी बिजली की प्रधानता होती है अतएव दोनों एक-दूसरे को खींचते हैं। इस छीन झपट में बेचारे बच्चे ही घाटे में रहते हैं और उन्हें क्षीण होना पड़ता है। इसलिए ध्यान रखना चाहिए कि अधिक उम्र के लोगों के पास बच्चे को न सुलाया जाय और विपरीत योनि के साथ तो कदापि न सुलाया जाय। यदि माता के पास कई बच्चे हों तो बड़े बच्चों को अलग-अलग सुलाने की आदत डालनी चाहिए। हाँ, दो लड़के या दो लड़कियाँ एक साथ सो सकते हैं। भाई और बहिन का भी एक साथ सोना हानिकारक है क्योंकि इससे उनकी कामवासना अल्पायु में ही जागृत हो सकती है। बालकों को किसी दुष्ट स्वभाव के मनुष्य के पास न खेलने देना चाहिए और उन्हें मृत्यु, युद्ध, शोक, रोदन, प्राणियों के बध आदि के स्थान पर न जाने देना चाहिए क्योंकि उनके कोमल मन पर उग्र घटनाओं का एक आघात लगता है जिसके कारण भावी जीवन में उन्हें किसी मानसिक अपूर्णता का सामना करना पड़ सकता है।

कई बार माता-पिता बच्चे को साथ रखते हुए शैया पर सो जाते हैं और काम चेष्टायें करने लगते हैं। वे समझते हैं कि बच्चा बहुत छोटा है या सोया हुआ है, यह उस संबंध में कुछ नहीं जानता होगा। इसलिए यदि वह भी इस चारपाई पर सोता रहे तो कोई हर्ज नहीं। किंतु इस अज्ञान का बड़ा बुरा प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। असल में बच्चा मिट्टी का टुकड़ा नहीं है, वह प्रबुद्ध मस्तिष्क धारण किये हुए है और डॉक्टर फ्राइड के मतानुसार अपने जीवन के आरंभिक दिनों में इतनी तेजी से ज्ञान प्राप्त करता है कि जितना अन्य किसी आयु में नहीं

करता। बच्चा चाहे कितना ही छोटा हो और वह जाग रहा हो या सो रहा हो, उस पर माता-पिता की काम चेष्टाओं का असर पड़ता है और वह उन बातों को बहुत छोटी उम्र में ही सीख लेता है। देखा गया है कि तीन-चार वर्ष के बच्चे आपस में काम चेष्टाएँ करते हैं। दस-ग्यारह वर्ष की लड़कियों में विकार जागृत होने लगता है। छोटी उम्र के लड़के अनेक लज्जाजनक आदतों में फँस जाते हैं। इतनी छोटी उम्र में काम शिक्षा उन्हें कहीं बाहर से नहीं मिलती। माता-पिता ही अज्ञानवश उनमें असाधारण उत्तेजना का बीज बो देते हैं, परिणामस्वरूप बालक को बाहर से कुछ सीखना नहीं पड़ता, वह अपने आप ही उस शिक्षा को मन में धारण करके पुष्ट करता रहता है और जरा सा होश सँभालते ही उनको क्रिया रूप में प्रकट करने लगता है। छोटे बच्चों में जो प्रवृत्तियाँ जाग उठती हैं, उनके कारण उनको पतन के मार्ग में बलात प्रवृत्त होना पड़ता है। बड़े-बूढ़े कहते हैं कि अब से कुछ समय पूर्व अठारह वर्ष की उम्र के लड़के धोती बाँधना भी नहीं जानते थे, उन्हें कामवासना संबंधी बिलकुल भी ज्ञान न होता था, पर अब तो इस उम्र के लड़के या तो पिता बन जाते हैं या प्रमेह, स्वप्नदोष आदि की बीमारियाँ लेकर वैद्यजी के दरवाजे की धूलि चाटते हैं। क्या ही अच्छा हो यदि माता-पिता बच्चों से दूर रहकर गुप्त इच्छायें पूर्ण करें। ऐसा करने पर वे अपने बालकों का बहुमूल्य जीवन नष्ट होने से बचा लेंगे।

आत्मतेज बढ़ाने के उपाय

दैनिक जीवन में दूसरों पर प्रभाव डालने की क्षण-क्षण पर आवश्यकता पड़ती है। यह कार्य आत्मतेज के बिना अन्य किसी प्रकार नहीं हो सकता। चेहरे पर मुर्दापन, नेत्रों में हीनता और वाणी में दीनता लादे हुए मनुष्य जहाँ जाता है, वहीं दुत्कारा जाता है। अशक्ति

में याचना का भाव है जो दुनियाँ की रुचि के प्रतिकूल है। संसार देने की अपेक्षा लेना पसंद करता है। तुम्हारे चेहरे पर प्रकाश है तो उसकी छाया दूसरों को कुछ देगी और वे प्रसन्न होकर तुम्हारी सहायता करेंगे, किंतु मलीन चेहरा औरों को खाने दौड़ता है, उससे सब लोग बचकर भाग निकलना चाहते हैं। तेजस्वी पुरुष जहाँ जाता है, उसका आदर होता है, लोग उसे प्रणाम करते हैं, उसकी बात मानते हैं, विरोधियों की बोलती बंद हो जाती है और जनता उनकी इच्छानुसार अपना मत बना लेती है। ऐसे ही व्यक्ति कुशल व्यापारी, सफल वकील, धनी किसान, पंच या प्रभावशाली उपदेशक बनते हैं। निस्तेज व्यक्तित्व चाहे वह बड़े बाप का बेटा क्यों न हो, रोता हुआ जाता है और मृत्यु का संदेश लेकर आता है।

आत्म-शक्ति, आत्म-विद्युत् बढ़ाने का सबसे प्रथम उपाय आत्म-विश्वास है। अपने को तुच्छ, निर्बल, अयोग्य या नीच समझना एक प्रकार की आत्महत्या है। हम बार-बार घोषणा करते हैं कि मनुष्यो! तुम क्षुद्र जीव नहीं हो, सम्राटों के सम्राट परमात्मा के तुम अमर-पुत्र राजकुमार हो। उसने तुम्हारे ऊपर इतना श्रम इसलिए नहीं किया है, कि कीड़ों की तरह जिंदगी बिताओ और कुत्तों की मौत मर जाओ। अहंकार का घमंड दूसरी बात है। भौतिक वस्तुओं को अपनी समझकर उन पर गुरूर करना अज्ञान है, परंतु आत्मा के दिव्य स्वरूप की झाँकी करना आत्म-दर्शन है, पुण्य है, कर्त्तव्य है, आत्म-सम्मान है। अहंकार और आत्म सम्मान की तुलना करना मूर्खता है। अपने अंदर परमात्मा का पवित्र अंश होने का विश्वास कर लेने पर कोई व्यक्ति आत्म-तिरस्कार नहीं कर सकता। अपने को नाचीज समझने का अर्थ है, अपने को परमात्मा से बहुत दूर समझना। 'हम परमात्मा के अंश हैं' इस मंत्र में अद्भुत शक्ति है। वेदांत का प्रमुख मंत्र 'सोऽहम्' प्रसिद्ध है, 'मैं वह (परमात्मा) हूँ,

इन भावनाओं को जितना दृढ़ करता जावेगा उसके अंदर से उतना ही आत्म-तेज जाग्रत होने लगेगा अपनी "मैं क्या हूँ" पुस्तक में हमने विस्तार पूर्वक इस संबंध में एक अभ्यास बताया है, उस स्थान से आत्मा के सूर्य समान तेजस्वी बिंदु की भावना करनी चाहिए और उसके आसपास समस्त विश्व को घूमते हुए अनुभव करना चाहिए।

विचारों की पवित्रता ऐसा अमोघ उपाय है, जिससे निश्चय ही आत्म शक्ति का विकास होता है। 'स्वस्थ और सुंदर बनने की अद्भुत विद्या' नामक पुस्तक में हम सिद्ध कर चुके हैं कि आत्मा का दिव्य तेज कुविचारों के आवरणों से ढँका रहता है। यदि काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष, पाप, पाखंड के विचारों को हटाकर मनुष्य प्रेम, पवित्रता, दया, और उदारता की भावनाओं को अपना लें तो आत्मा का प्रकाश इंद्रियों की खिड़कियों में होकर जगमगाने लगेगा और वह पुण्यात्मा व्यक्ति असाधारण तेजस्वी बन जावेगा।

किसी से मिलने जाओ तो उसका आदर करो, परंतु अपने को उसकी अपेक्षा हीन मत समझो। नम्रता से बातचीत करो, पर गिड़गिड़ाओ मत। जो तुम्हारे लिए उचित आसन हो सकता है उस पर बैठो, पीछे की ओर या नीचे के स्थानों पर खिसक कर बैठना बुरा है, किसी को अन्नदाता, प्रतिपालक, हुजूर , प्रभू, महाराजाधिराज आदि शब्दों से संबोधन मत करो, क्योंकि इनमें अपनी हीनता का भाव छिपा हुआ है। संबोधन के लिए भगवन्, महोदय, महानुभाव, श्रीमान, पंडितजी आदि शब्द उपयुक्त हैं। इनमें से दूसरों को प्रोत्साहन तो है, पर अपना अपमान नहीं है। प्रसन्न चित्त होकर बातचीत करना, थोड़ा मुस्कारते जाना प्रभाव डालने का बहुत अच्छा तरीका है। थोड़ा मुस्कराने से चेहरे के आसपास की नसें कुछ इस प्रकार से तनती हैं कि उनमें मस्तिष्क की प्रभावशाली विद्युतधारा

खिंच आती है। यह केवल उन नसों में होकर होठ या गालों पर ही प्रदर्शित नहीं होती वरन नेत्रों में भी उसका एक बड़ा भाग पहुँच जाता है और वे भी चमकने लगते हैं। वैज्ञानिक अभी पूरी तरह से यह खोज नहीं कर पाये हैं कि हँसने या मुस्कराने के समय चेहरे पर जो असाधारण तेज प्रकट होता है वह कहाँ-कहाँ से किस प्रकार इकट्ठा होता है, परंतु यह बात यंत्रों द्वारा निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि हँसते हुए चेहरे में साधारण दशा की अपेक्षा करीब पाँच गुनी विद्युत अधिक होती है। यह दूसरों पर आश्चर्यजक प्रभाव डालती है और जब लौटकर शरीर में वापस जाती है तो रक्त संचार एवं स्नायु मंडल पर बड़ा हितकर प्रभाव करती है। जब तुम किसी के पास अपना अभिप्राय लेकर जाओ, तो रोनी सूरत मत बनाओ, वरन अपने चित्त को प्रसन्न चित्त बनाए रहो। समता से बातचीत के लिए यह आवश्यक है कि झेंपते हुए न बैठो। दूसरे व्यक्ति की आँखों की ओर मृदुलता के साथ देखो। अकड़कर उद्धतपन के साथ किसी की आँखों से आँखें लड़ाना बुरा प्रभाव डालता है, परंतु प्रेम और सरलता की भावनाओं के साथ सामने वाले व्यक्ति से बात करने का अर्थ उसे अपने पक्ष में कर लेना, उस पर पर्याप्त प्रभाव डाल लेना है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा